[Shrimati Mamida Habibullah]

every grain of surplus which the producers wish to sell. A price should be so fixed that the cost of modern cultivation is ensured leaving enough per acre of production for the peasant to be able to improve and maintain his technique.

Napoleon once said that "an army marches on its stomach". What we should realise is that a nation lives on its stomach. Therefore, it is important that by cutting out the middlemen, the nation should be not only the collector but the distributor of its own food. Societies and groups of producers drawn from the rural peasantry and their close city associates should be in charge of the distribution system through popular public agencies. If an army has to live on its stomach, is it not logical that the people of our country should not have to look over their shoulders for food but that the food should come forward to them wherever they are ? This should be the guiding principle of the distribution system.

Every mohalia and every village should have food easily supplied to them,, food that has been collected through block, city and district centres. It should constitute both fresh rations and cereals which have been well stored in good store-houses and cold storages.

To summarise then, the means of production should be made available to every peasant at the cheapest and easiest rates. His produce should be collected and distributed by agencies of the people and not purely of officials.

The cost of electricity, water, fertilizer and seed should be kept at the minimum, as near as possible to the level of no profit and no loss. Only thus can we serve the people and fulfill the spirit of the 20-point programme.

Only yesterday our Prime Minister has again stated quite clearly that there must be a proper balance In the implementation of the 20-point programme. The imbalances in our rural economy have been mainly responsible for our imbalance between city and village leading to the poverty of the peasantry and the over-prosperity of the entrepreneurs.

Sir, I am quite confident that In the present atmosphere of hope and the cooperative mood of the people, if our competent and far-sighted Government could bring about a complete transformation not only in the agricultural pattern hut in the cost of inputs, collection and distribution, with broad participation of the people and bring about a change from top to bottom in depth, then there is every indication lhat by changing the pattern of village economy, we can achieve our cherished goal of *garibi hatao.* Therefore, while supporting this Resolution, I would like to conclude by saying in all humility and with a note of courage :

"मुद्दत से जो सोचा करते थे अब वोह भी
जमाना आएगा
हर मुशकिल अब आसां होगी हर नक्शे
कोहन मिट जाएगा
अब कोई नया फ़ितना हरगिज़ तस्नीफ
न होने पाएगा ।"

Once again, 1 thank you.

MR. DEPUTY CHAIRMAN : The House stands adjourned till 2.45 P.M.

The House then adjourned for lunch at six minutes past one of the clock.

The House reassembled after lunch at forty-seven minutes past two of the clock, Mr. Deputy Chairman in the Chair.

RESOLUTION RE. ENSURING REMUNERATIVE PRICES FOR AGRICULTURAL PRODUCE AND MAINTAINING PARITY IN PRICES BETWEEN AGRICULTURAL PRODUCE AND INDUSTRIAL GOODS— *Contd.*

श्री नत्थीसिंह (राजस्थान) : उपसभापति महोदय, सिंह साहब ने जो यह प्रस्ताव रखा है वह सामयिक है । मैं समझता हूं शिन्दे साहब को अब तक इस सदन का और दूसरे सदन का मानस ज्ञात हो चुका है । इस सदन में इस प्रकार का प्रस्ताव पिछली बार भी आया था । तब भी एक स्वर से यह मांग की गयी थी कि हमारे देश का जो प्रमुख धन्धा है खेती उसको हम लाभ का धन्धा बनायें, आज जो वह एक अनइकानामिक प्रोफेशन के रूप में है उसमें न रहने दें । इस सदन में जो बात कही जाती है उस पर निश्चित रूप से ज्यादा ध्यान देने की आवयश्कता है । आज भी जब हम यह चर्चा करते हैं कि खेती के मूल्यों का लागत के साथ और मुनाफ के साथ सम्बन्ध होना चाहिए तो इस बात को गम्भीरता से नहीं लिया जाता । आज हम इस देश की तरक्की चाहते हैं, लोगों के रहन-सहन का स्तर बढ़ाना चाहते हैं तो निश्चित रूप से हमें इस बात पर ध्यान देना पड़ेगा । खेती पर जो 80 प्रतिशत से ज्यादा

लोग निर्भर हैं उनकी आमदनी बढ़ाने की आज जरूरत है । माननीय उपसभापति महोदय, जो 6 एकड़ से नीचे का काश्तकार है उसको तो अनइकानामिक होल्डिंग वाला मानते हैं । लेकिन आज जिनके पास ज्यादा जमीन है उनकी हालत भी क्या है ? उस तरफ मैं आपका ध्यान आकर्षित करना चाहता हूं । पिछली बार इस सदन में जब आर्थिक समीक्षा प्रस्तुत हुई थी और उस पर विचार हुआ था तो एक बात बहुत जोर से कही गयी थी कि हम देश में सारी कीमतों को कम ला सके हैं, लेकिन आर्थिक समीक्षा में यह माना गया था कि जो भी भाव गिरे हैं और जो भाव कम हुए हैं उनमें मुख्य बात यह है कि कृषि-उत्पादित वस्तुओं के भाव सबसे ज्यादा नीचे गिरे हैं, कारखानों में बनने वाली चीजों के दाम नीचे नहीं गिरे हैं । यह इसलिए हुआ कि हमने खेती के सम्बन्ध में कभी इस बात पर जोर नहीं दिया कि उसके लागत मूल्य को सही रूप से फैलायें । आज हमारा कृषि मूल्य आयोग है, अब उसमें एक किसान प्रतिनिधि भी है, लेकिन पिछली बार उसमें कोई किसानों का प्रतिनिधि नहीं था । और उसके आधार पर मेरा इस संबंध में निवेदन है कि इस प्रथा को बदला जाय और मंत्री जी से मैं कहूंगा कि आपके जितने कृषि फार्म्स हैं कि जिन को कृषि विभाग चलाता है वहां देखा जाय कि पैदावार की लागत कितनी आती है । जो कृषि यूनिवर्सिटियां हैं उनके फार्म्स पर लागत क्या आती है उत्पादन की और उस के आधार पर आप तय करें कि किसानों को क्या दाम उनकी उपज का दिया जाना चाहिए । आज जिस बात की ओर मैं आप का ध्यान दिलाना चाहता हूं वह यह है कि यह बहुत कहा जाता है कि हम ने किसानों के लिये डैम्स बनाये हैं, लेकिन उन की लागत का खर्च भी पूरा नहीं आ पाता और इसलिये बिजली के और इरिगेशन के रेट्स बढ़ाने की बात कही जा रही है । लेकिन क्या यह सही नहीं है कि भाखड़ा या दूसरे बांधों से पूरी तरह से सिंचाई नहीं हो पाती और उसके द्वारा पैदा की हुई बिजली को कंसेशनल रेट्स पर इंडस्ट्रीज को दिया जाता है । मैं मानता हूं कि इस देश के विकास के लिये खेती का उत्पादन बढ़ने के साथ-साथ औद्योगिक उत्पादन भी बढ़ना चाहिए और यहां के विकास के लिये दोनों ही बहुत जरूरी हैं लेकिन इस के साथ साथ यह भी ध्यान रखना चाहिए कि कौन सा काम हम ऐसा करें कि जो हमारे देश का मुख्य धंधा है उस में लगे हुए लोग यह न महसूस करें कि हम तो एक नुकसान के धंधे में लगे हुए हैं । क्या यह बात ठीक नहीं है कि जब हम कभी मूल्य स्थिर करते हैं किसी चीज का और यह बात कई बार उठायी गयी है—तो वह मूल्य निर्धारण किसानों की बुवाई के पहले होना चाहिए । हमेशा कहा जाता है कि दामों की घोषणा बोवाई के पहले नहीं, कटाई के पहले करेंगे । यह खतरा बताया जाता है और कृषि मंत्रालय कहता है कि और हम ने बोवाई के पहले दामों की घोषणा कर दी तो हो सकता है कि किसान उन जिन्सों को बोये ही नहीं । इस का मतलब यह है कि किसान को आप बेगारी बना कर रखना चाहते हैं, चाहते हैं कि वह अपने हित का काम न कर सके । हमारी नीति साफ होनी चाहिए कि किसान को कैश काप या खाद्यान्न, इन दोनों में से किस को ज्यादा पैदा करना है । और इन दोनों के भाव सही तौर पर पहले ही तय होने चाहिए ।

आज मैं दो, तीन बातों की तरफ आप का ध्यान दिलाना चाहता हूं । हम इनपुट्स की बात करते हैं, कर्ज की बात करते हैं । यह बात सही है कि आज किसान को कोआपरेटिव्ज की मार्फत, कमर्शियल बैंक्स की मार्फत या रूरल बैंक्स की मार्फत कर्ज दिया जाता है अपने इनपुट्स के लिये और उस पर साढ़े 13 से 14 परसेंट तक ब्याज लिया जाता है । इस से कम ब्याज नहीं लिया जाता, लेकिन जो लोन इंडस्ट्रीज के विकास के लिये, उद्योग धंधों के विकास के लिये फाइनेंस कारपोरेशन देते हैं वह चार से 6 परसेंट तक दिया जाता है । मैं इस बात को जानता हूं कि जब मैं इस बात को कहूंगा तो मंत्री जी जवाब में बतायेंगे कि फाइनें-

शियल इंस्टीट्यूशन्स इस कर्ज को देते हैं । क्यों नहीं राज्य आगे आता इस बात में और कहता है कि हम जो कर्ज किसान को देते हैं उस के इंटरेस्ट को सब्सीडाइज करने के लिये कोई योजना बनायेंगे । अगर ऐसा होगा तो उस के साथ एक बात यह उठेगी कि अगर इस तरह की किसी सब्सीडी की बात चली तो देश में मुद्रा स्फीति बढ़ जायगी । मैं मंत्री जी से पूछना चाहता हूं कि जब आप रेफ्रिजिरेटर पर कंसेशन देते हैं तो मुद्रा स्फीति नहीं होती, जब दूसरी किन्हीं चीजों पर कंसेशन देते हैं तो मुद्रा स्फीति नहीं होती, जो हमारी सुख सुविधा की चीजें हैं, जो हमारे लग्जरी के सामान हैं, जो आशायस के सामान हैं उन पर कंसेशन देने से मुद्रा स्फीति नहीं होती, उस समय कहा जाता है कि हम यह कंसेशन इसलिये दे रहे हैं ताकि इंडस्ट्री सफर न करे, लेकिन जब ट्रैक्टर का दाम घटा दिया जाता है या उस पर एक्साइज ड्यूटी कम कर दी जाती है तो इंफ्लेशन की बात सामने आ जाती है । यह इंफ्लेशन की बात नहीं है, यह हमारे सोच की कमी है और सोच यह है कि अभी तक हम यह मान कर चले आ रहे है कि किसान अभी तक इतना संगठित नहीं है कि वह अपनी बात को तेजी से और जल्दी मनवा सके । यह स्थिति क्या हम लाना चाहते हैं कि किसान भी उसी तरह से ट्रेड यूनियन्स के शिकार हों और ट्रेड यूनियनें किस तरह के तरीके इस्तेमाल करती हैं, यह तो आप सब को मालूम है । लेकिन किसान देश भक्त है, वह भूमि पर हल चलाता है और पैदा करता है । हमें उस को उस की उपज के सही दाम देने चाहिएं । अभी आप ने गेहूं 105 रुपये में खरीदना तय किया था । मंत्री जी से मैंने इस बारे में सवाल पूछा था कि कितने लोगों का अनाज आप ने 105 रुपये में खरीद किया है । मुझे मालूम हुआ कि जौ का भाव 14 रुपये मन तक गया था । 65 रुपये क्विंटल उस का भाव रखा गया था । हमारे इलाकों में 50 और 45 रुपये तक उस समय जौ बिका था । मैंने इसी सदन में सवाल उठाया था और मैंने चिट्ठी भी लिखी थी । उपसभापति महोदय, चिट्ठी का जवाब तो मुझे मिला कृषि मंत्रालय से । मैं उस बारे में क्या कहूं, मजबूरी है, हंसी भी आती है और दुःख भी होता है । उस का जवाब था कि हम ने आप की चिट्ठी की जांच कर ली है और मंडियों में जौ का भाव 65 रुपये क्विंटल से नीचा ऊंचा नहीं था । बेचने वाला किसान तो रो रहा है कि हमारा 45 रु० में बिक रहा है, लेकिन कृषि मंत्री जी ने कहा कि भाव तो 65 रुपये से ज्यादा था । आपने किसानों से भी खरीदा; 65 में खरीदा नहीं । कभी कह दिया काला हो गया होगा । लेकिन हिन्दुस्तान में जौ कितना सरकार ने खरीदा है इसकी आपको जांच करानी चाहिए । दूसरी बात 105 रु० पर आपने कितना गेहूं खरीदा ? जब हमारी इस सदन में मांग थी कि 130 रुपये से ज्यादा दाम तय होंगे तो किसान को लागत मूल्य मिलेगा । इससे कम में दाम देंगे तो किसान नुकसान में रहेगा । उसके बाद 105 रुपये आपने तय किया, लेकिन हरियाणा और पंजाब के आंकड़े आपने बता दिये कि कुल 105 रु० में कितना गेहूं खरीदा । हमारा इस बात में निश्चित रूप से दावा है कि सारे देश में 105 रु० पर गेहूं खरीदने की तादाद कम है, 105 रु० से नीचे पर खरीदने की तादाद ज्यादा है । उसके बावजूद भी बाजार में जो गेहूं बिका है वह निश्चित रूप से ज्यादा है जो किसानों को निश्चित भाव से भी कम में बेचना पड़ रहा है । लागत दाम आपका कौन तय करेगा ? ठीक है, आप एक्सपर्ट्स से तय कराइये, लेकिन एक्सपर्ट्स के हिसाब से तय कराओगे तो निश्चित रूप से आप अंधकार में रहेंगे । एक्सपर्ट्स को, मैं नहीं मानता कि किसान से ज्यादा ज्ञान है, जो कि खेत में हल चलाता है, इसका कि उसकी लागत क्या लगती है । उसके साथ-साथ कितना मुनाफा आप उनको देते हैं, इस बात की गारन्टी दीजिए । आप इंडस्ट्रीज में हंड्रेड परसेंट और उससे भी ज्यादा मुनाफा देते हैं, उसके बावजूद भी उस पर कोई अंकुश नहीं लगाते हैं । तो प्रस्तावक महोदय ने जिस बात को कहा है कि कुछ वस्तुओं पर क्रय-विक्रय के मूल्य में 15 प्रतिशत का अंतर

नहीं होना चाहिए । क्रय-विक्रय का यहां मतलब नहीं है । मैं कहता हूं कि लागत जो आये और उसको खरीदा जाए और उसको बेचा जाए, राज्य सरकार जो बेचती है उसमें अन्तर है, लेकिन हम कहते हैं कि एक आना से ज्यादा घट बढ़ नहीं होनी चाहिए हमारी लागत में और जिस भाव पर हम बेचें उसमें । इतना मुनाफा किसान को दें । तो वही सिद्धान्त लागू होना चाहिए जो इंडस्ट्री में है । इतना मुनाफा हमें भी दो । क्या हम इस तरह की जांच कराने को तैयार हैं कि इंडस्ट्री की लागत क्या है, उसको मुनाफा क्या होना चाहिए और जो किसान को कपड़ा मिलता है, मजदूर को कपड़ा मिलता है वह किस दाम पर मिलता है और किसान पर यह पाबन्दी है कि तुम अगर इतने मूल्य में अनाज नहीं बेचोगे तो आप पर कोई कानून लागू कर मजबूर कर दिया जाएगा । मैं इस सम्बन्ध में · · ·

श्री देवराज पाटील (महाराष्ट्र) : मीसा में बन्द कर दिया जाएगा ।

श्री नत्थी सिंह : मीसा में तो मरजी पर है, सबको नहीं कर सकते । लेकिन है जरूर । इस सम्बन्ध में मेरी राय यह है कि आज तक हम यह कह रहे हैं कि जो सीमान्त किसान हैं उनको हमें सुविधा देनी चाहिए । क्या सुविधा देना चाहते हैं ? इसमें सवाल रखा है कि भू-राजस्व, बिजली आदि की दरें कम कर दी जायें । मैं कहता हूं कि आज भी हम यह कहने में हिचकते हैं कि जो अनुत्पादक जोतें हैं, जो अनार्थिक जोतें हैं उनसे आप भू-शुल्क किस बात का लेना चाहते हैं । हमको हिम्मत के साथ कहना चाहिए कि अनुत्पादक जोत हम नहीं रहने देंगे । उसको ऐसी सुविधायें देंगे, उसके अनाज के दाम इस तरह से तय करेंगे कि अनुत्पादक जोतें नहीं रहेंगी । ऐसा करेंगे तो निश्चित रूप से अनुत्पादक जोतें कम होंगी और उत्पादन में बढ़ोत्तरी होगी । आज तो ज्यादातर हम प्रकृति के ऊपर निर्भर हैं । हम कह दें कि उत्तर प्रदेश, राजस्थान, हरियाणा हम तीनों जमुना के पानी में डूब रहे हैं और आपका नियम यह है कि उस डूबने से हमारी खरीफ की फसल खराब होगी, उस पर भी हमसे इरिगेशन टैक्स लिया जाएगा । हम इस बात को कहते-कहते थक चुके हैं कि हमारी फसल बरबाद हो रही है, मवेशी बरबाद हो रहे हैं, जनजीवन अस्तव्यस्त हो रहा है, बेमौके बाढ़ का पानी आता है उस पर इरिगेशन टैक्स कैसा ? वह कहते हैं रबी कि फसल बहुत अच्छी है । अगर हमसे इसका मुआवजा लेते हो तो खरीफ की फसल का मुआवजा क्यों नहीं देते ? किसी का घर डूब जाएगा तो उसको सौ रुपये पकड़ा देंगे । तो हमारी मेहनत से कमाई हुई झोंपड़ी का मूल्य यह दिया जाता है । इस दृष्टिकोण को बदलने की जरूरत है । अगर इस दृष्टिकोण को हम बदलेंगे नहीं तो हम कैसे कहेंगे कि हम किसान को निश्चित रूप से उस स्तर पर लाना चाहते हैं जिससे हम यह कह सकें कि इस देश का जीवन स्तर हमने बढ़ाया ।

3 P.M.

एक बात और कहना चाहता हूं कि हम क्यों नहीं फैसला करना चाहते कि जो बाढ़ आती है या सूखा पड़ता है वह न हो । इसके लिये हम क्यों नहीं राष्ट्रीय स्रोत मान कर जल परिषद् की स्थापना करते ? भारत सरकार को चाहिये कि वह इस प्रकार की परिषद् बनाए और चाहे नदियों का विवाद हो, बाढ़ का पानी हो सब का कंट्रोल उस संस्थान पर हो । हम समझते हैं इससे सही तरह से पानी का वितरण हो सकेगा ।

आज मैं आपसे कहना चाहता हूं कि जो सुविधाएं आप दे रहे हैं उसमें आपका दृष्टिकोण खेती के प्रति स्टैप मदरली है क्योंकि दूसरी तरफ जब आप इंडस्ट्रीज को बढ़ावा देना चाहते हैं तो उनको हर प्रकार की सुविधाएं दे रहे हैं । मैं यह नहीं कहता कि उनको मत दो, लेकिन जो सुविधाएं आप उनको देते हैं उसके अनुसार हमारे देश में जो खेती का सबसे बड़ा धंधा है, उसको मुनाफे का धंधा मानकर, उतनी ही उनको भी सुविधाएं दें।

मैं आपके नोटिस में एक-दो बातें और लाना चाहता हूं । हमने छोटे किसानों का ऋण

माफ कर दिया है । स्थिति क्या बनी है ? रुरल बैंक्स हमने बनाए हैं, को-आपरेटिव बैंक्स हमने बनाए हैं, कामर्शियल बैंक्स हमने बनाए हैं । आज आप कहने लगे हैं कि 70 करोड़ रुपया ऋण के रूप में देंगे । एक तरफ हमने एक अच्छा कदम उठाया है और अच्छा कदम बरकरार रहे इसके लिये कोई व्यवस्था नहीं की है । दूसरी तरफ जो पैदा करता है मेहनत से उसको सही दाम नहीं मिलते, वह अपने पैर पर खड़ा नहीं हो सकता और तीसरी तरफ जो हम उद्योग धंधे लगाते हैं, आज भी इनके लिये हमारा रुझान शहरों की तरफ है । हमने कहा है कि ग्रामों में भी उद्योग धंधे लगाये जाएंगे । इस पर हम बहुत विचार करते हैं, लेकिन फिर भी नहीं लगा रहे हैं । जो शहरों की तरफ दौड़ लग रही है इसको रोकने के लिये हमें खेती को मुनाफे का धंधा बनाना होगा । मैं यह नहीं कहता कि हमने इसके लिये कुछ नहीं सोचा, हमने इस पर बहुत विचार किया, सीलिंग कानून लाए । उसमें हमने अधिकतम पर सीमा बांधी है हम कहते हैं मेहरबानी करके न्यूनतम पर भी आप को सीलिंग लगा देनी चाहिये । अब समय आ गया है कि जो असमानता है उसे दूर किया जाए । यह असमानता तब मिटेगी जब यह पाबंदी लगाएंगे कि एक आदमी एक धंधा करेगा । इसलिये आपको यह पाबंदी लगानी होगी ।

मुझे जहां तक याद है इस सदन में पहले भी यह आवाज बुलंद की गई थी कि किसान को उसकी पैदा की हुई चीजों का उचित मूल्य मिलना चाहिये । उसमें और कारखानों में पैदा होने वाली चीजों का मुनाफा समान होना चाहिये, 'एक सा मुनाफा' की नीति निर्धारित करनी चाहिये और आज भी इस बात को कहा जा रहा है । मुझे पूरा विश्वास है कि इस बात को सुना ही नहीं जाएगा बल्कि इसकी क्रियान्विती भी की जाएगी उस युग में जब कि 20-सूत्री आर्थिक कार्यक्रम के जरिये हम हैव नोट्स की तरक्की करना चाहते हैं ।

श्री सुल्तान सिंह (हरियाणा) : उपसभापति महोदय, यह प्रस्ताव जो मेरे लायक दोस्त इन्द्रदीप सिंह जी लाए हैं, इस प्रस्ताव के जरिये सरकार का ध्यान किसान की जो हालत दिन-ब-दिन खराब होती जा रही है, उसकी तरफ दिलाया है । उपसभापति महोदय, कई बार इस हाउस में सरकार के ध्यान में यह बात लाई गई कि किसान को उसकी पैदावार का उचित मूल्य नहीं मिलता । पता नहीं सरकार इस तरफ से क्यों लापरवाह है । मैंने पिछली बार भी कहा था और आज फिर कहता हूं कि हमारी बदकिस्मती है कि हमारी जो एग्रीकल्चर मिनिस्ट्री है इसके साथ फूड का लफ्ज जुड़ा हुआ है—फूड एंड एग्रीकल्चर । एक तरफ हमारी मिनिस्टरी किसान के लिये काम करती है और दूसरी तरफ बनिये के लिये भी साथ-साथ काम करती है । अपनी पापुलरिटी के लिये यह मिनिस्ट्री के हाथ में है कि कंज्यूमर को सस्ती चीज दें । वह सस्ती चीज किसी और से छीन कर नहीं देती है, बल्कि वह किसान से ही छीन कर देती है । जितने संगठन आज तक खड़े हुए जिनको किसान के हितैषी संगठन कहा जाता है, वे सारे किसान को लूटते जा रहे हैं । आपने एग्रीकल्चर प्राइस कमीशन बनाया इस बात के लिये कि किसान को चीजों का उचित दाम दे सकें, स्टडी करके । लेकिन एग्रीकल्चर प्राइस कमीशन बिलकुल अंधा-धुंध ढंग से कार्यवाई कर रहा है । उनको इस बात का ध्यान ही नहीं होता है कि किसानों के हितों की रक्षा के लिए उनको बनाया गया है और इसलिए उनका यह प्रयत्न होना चाहिए कि किसानों को उचित दाम मिलें । मैंने पिछली बार भी इस बात को सदन में कहा था और आज मैं फिर दोहराना चाहता हूं कि एग्रीकल्चर प्राइस कमीशन के मेम्बरों को तनख्वाह देने के बजाय अच्छी जमीन दे दी जाय । मैं चाहता हूं कि उनको बढ़िया जमीन दे दी जाय । इसके बाद वे देख लें कि जिस हिसाब से वे अनाज के भाव निर्धारित करते हैं, उस हिसाब से उनकी उपज से उनकी तनख्वाह निकलती है या नहीं । मैं चाहता हूं कि आप उनको 18 एकड़ के बजाय

36 एकड़ जमीन दे दें और उससे आप देख लें कि उससे उनका डी० ए० और तनख्वाह आदि निकलते हैं या नहीं । अगर आप ऐसा करेंगे तो मैं समझता हूं कि ये लोग फिर भाव की बात नहीं करेंगे । यह बात आप मुझ से लिखवा कर ले लें । वे कभी खेती करने को तैयार नहीं होंगे । लेकिन दूसरी तरफ किसान को कहते हैं कि वह उनके द्वारा निर्धारित भाव पर अपनी चीजें बेचें । मैं समझता हूं कि एग्रीकल्चर प्राइस कमीशन, जिसको किसानों के नाम पर बनाया गया था, मेरे ख्याल में एग्रीकल्चर मिनिस्ट्री के फण्ड से पैसा लेता है, है लेकिन वह एग्रीकल्चरिस्ट्स और किसानों का नम्बर एक दुश्मन है । जहां तक फूड कारपोरेशन का सवाल है, उसकी हालत यह है कि जब मंडियों के अन्दर अनाज आता है तो बुरी तरह से लूट मच जाती है । एक-एक इंस्पेक्टर लाखों रुपये कमा जाता है । हर किसान का अनाज रिजेक्ट कर दिया जाता है और जब बनिया उसको खरीद कर ले जाता है तो फिर फूड कारपोरेशन वाले उसी अनाज को बनिये से खरीद लेते हैं..... (*Interruptions*) । यह सारे हिन्दुस्तान की बात कह रहा हूं । सारे देश में ऐसा होता है । फूड कारपोरेशन का एक-एक इंस्पेक्टर लाखों रुपये कमाता है । फूड कारपोरेशन किसानों की मदद के लिए नहीं आता है बल्कि उनको परेशान करने के लिए आता है । इसके अलावा फूड कारपोरेशन 40 रु० प्रति क्विंटल के हिसाब से हैंडलिंग चार्जेज लेता है । जिस निगम को कंज्यूमर और किसान के इंटरेस्ट के लिए बनाया गया था, आज वही निगम दोनों को खा रहा है । हमारे देश में पहले देशी राजा हुआ करते थे, लेकिन अब सरकार ने ये नये निगम और कारपोरेशन बना करके नये राजा तैयार कर दिये हैं । ये लोग हवाई जहाज से यात्रा करते हैं, फाइव स्टार होटलों में ठहरते हैं और इनके खर्चे अन्धा-धुन्ध बढ़ते जा रहे हैं । दूसरी तरफ हालत यह है कि 40 रु० हैंडलिंग चार्ज के लिए जाते हैं । किसानों से चीजें खरीदी नहीं जाती हैं और कंज्यूमर को ठीक दाम पर चीज मिलती नहीं है । गोदामों में अनाज सड़ रहा है । जगह-जगह तबाही हो रही है । इस तरह से फूड कारपोरेशन द्वारा बरबादी की जा रही है । मैं चाहता हूं कि इसकी तरफ सरकार तवज्जह दे ।

इसके अलावा हमारे देश के अन्दर सीड् कारपोरेशन है । यह किसानों को अच्छा सीड नहीं देता है । पिछली बार भी मैंने कहा था कि रोज आप रात को रेडियो सुनें तो खबर सुनाई जाती है कि फलां हलवाई को मिलावट के अपराध में दो साल की सजा हो गई । लेकिन फूड कारपोरेशन और सीड कारपोरेशन के किसी भी चेयरमैन को आज तक सजा नहीं दी गई है । जब कि हालत यह है कि फूड कारपोरेशन और सीड कारपोरेशन की चीजों में भी मिलावट होती है । इसलिए आज आवश्यकता इस बात की है कि ये जो तीन चार निगम हैं और जो किसानों के हितों के लिए बनाये गये है, इन पर अंकुश लगाया जाय । शिन्दे साहब से मैं कहूंगा कि वे इन बातों की तरफ ध्यान दें । सीड कारपोरेशन वाले जो मिलावट करते हैं उसकी पूरी रोकथाम होनी चाहिए । इसके अलावा मुझे ताज्जुब इस बात का है कि एग्रीकल्चर मिनिस्ट्री को इस बात की जानकारी नहीं है कि अभी तक गन्ने का 13-14 करोड़ रुपया बकाया है ।

श्रीमती लक्ष्मी कुमारी चूंडावत (राजस्थान) : पूरा 15 करोड़ रुपया है ।

श्री सुलतान सिंह : पूरा 15 करोड़ रुपया—हमारी बहिन बता रही हैं—गन्ने का बकाया है शुगर मिलों की तरफ और यह सरकार अभी तक उनको नहीं दिलवा सकी । इसके अलावा उन शुगर मिलों में क्या होता है यह एक अलग बात है । जितने शुगर इंडस्ट्रीज के मालिक हैं उनकी पुरानी मशीनें हैं, ये रिकवरी के ऊपर भाव खोलते हैं । गन्ने की भी रिकवरी के ऊपर भाव खोलते है । मशीन क्रश नहीं करती तो किसान उस तरह से भी मारा जाता है और गन्ने की रिकवरी नहीं होती तो उसमें

पैसा कटता है और शुगर मिलें उसका पैसा दबा कर बैठ जाती हैं । ये शुगर मिलें जो हैं इनका नेशनलाइजेशन होना चाहिए और नेशनलाइज्ड करके जितना रुपया किसानों को शुगर इंडस्ट्री की तरफ, मिल मालिकों की तरफ बकाया है, उसको अदा करना चाहिए । इसके अलावा और जितनी बातें हैं उन चीजों को आप देखें । दवाइयों और अन्य चीजों के दाम ज्यादा से ज्यादा बढ़ रहे हैं और जो इम्प्लीमेन्ट्स आप किसानों के लिये खरीदें उसके भाव बड़े तेज बढ़े जा रहे हैं । किसानों की चीजों के भाव बड़ी तेजी से नीचे गिरते चले जा रहे हैं और दूसरे भाव बढ़ते जा रहे हैं ।

उपाध्यक्ष महोदय, मैं आपके मार्फत शिन्दे साहब से यह प्रार्थना करूंगा कि आपकी एग्रीकल्चर की तीन मिनिस्ट्री हैं, कम से कम आप यह सजेशन दें और मैं इस हाउस के जरिये देता हूं प्रधान मंत्री जी को कि एग्रीकल्चर मिनिस्ट्री सेपरेट होनी चाहिए । उसका 24 घंटों का काम खेती की पैदावार बढ़ाना, किसानों की दिक्कतों को दूर करना, किसानों को ठीक भाव दिलवाना, किसानों के इंटरेस्ट को वाच करना होना चाहिए । लेकिन मुश्किल यह है कि आप बनिये भी हैं और किसान भी हैं । पता नहीं क्यों आप उस तरफ की बात ज्यादा सोचते हैं और हमारी तरफ की कम सोचते हैं, इससे हमको घाटा हो रहा है । तो मैं आपकी मार्फत सरकार से प्रार्थना करूंगा कि किसान बेचारा रोजाना घाटे में जा रहा है । आप देखिये कि अगर कोई एग्रीकल्चर में पी० एच० डी० हो तो वह एग्रीकल्चर में, खेती में काम करने को तैयार नहीं, अगर कोई बी० एस०-सी० एग्रीकल्चर है तो वह खेती करने को तयार नहीं, अगर कोई एम० एस-सी० एग्रीकल्चर है तो वह खेती करने को तैयार नहीं । इसके सीधे मायने क्या हैं । इसके सीधे मायने यह हैं कि बाल-पेन बेचने वाले की, अखबार बेचने वाले की आमदनी है, लेकिन एग्रीकल्चरिस्ट का बेटा पी० एच०-डी० एग्रीकल्चर करने के बाद भी खेत पर नहीं जाता । उसका कारण यही है कि खेती की वाएबल यूनिट है या नहीं । मैं कहता हूं कि खेती घाटे का सौदा बनती जा रही है । हर किसान यह महसूस करता है कि उसके बच्चे, बीवी सभी खेती के अन्दर काम करते हैं, उसके बावजूद उसको रोटी नहीं मिलती और इसी की वजह से आज बड़े-बड़े शहर बनते जा रहे हैं । अभी एग्रीकल्चर प्राइस कमीशन खेती की तरफ आया, इफ दे आर ओनेस्ट उन्हें खेती की तरफ आना चाहिए । मैं कहता हूं कि अगर वे ईमानदार हैं तो उन्हें मेरा आफर कबूल करना चाहिए ।

कृषि और सिंचाई मंत्रालय में राज्य मंत्री (श्री अण्णासाहिब पी० शिन्दे): श्री रणबीर सिंह जी को रखिये ।

श्री सुलतान सिंह : जो हैं उनको ही भेजिये । श्री रणबीर सिंह जी को क्यों लेते हो ।

उपसभापति महोदय, मेरी गुजारिश यह है कि इस वक्त अगर खेती को हम वाएबल यूनिट नहीं बनायेंगे तो ये शहर बढ़ते रहेंगे और ये शहर बढ़ते-बढ़ते एक दिन इस सरकार के लिये सिर दर्द बन जायेंगे । आज क्या हालत है किसान की (*Time bell rings*) । इतनी बुरी हालत है । सारा इलाका डूब गया है बाढ़ से, सारी उसकी फसलें डूब गईं और इधर दिल्ली के किसान की इतनी बुरी हालत है जिसका कोई हिसाब नहीं । शहर से अचानक 50 हजार, 60 हजार झुग्गी-झोंपड़ियों में रहने वाले लोगों को जहां बढ़िया से बढ़िया पैदावार होती है, ऐसी ऊंची जगहों पर उनको बिठा देते हैं । जहां सूखी जमीन है, अच्छी फसल है, वहां ले जा कर के फैंक देते हैं । फसल का कोई मुआवजा नहीं, कोई नोटिस नहीं, कहीं उनको कोई किस्म की और सहूलियत नहीं । खड़ी फसल के अंदर, आप जा कर देखें, शहरों से डेरियां हटा कर उन किसानों के खेत में बैठा देते हैं, शहर की झुग्गी-झोंपड़ी वालों को बैठा कर किसानों को निकाल रहे हैं । किसान को उचित मुआवजा देना

चाहिए, नोटिस देना चाहिए, जमीन एक्वायर करने का । तो इस तरह से किसान के साथ रोज़-ब-रोज़ ज्यादती करना उचित नहीं है । तो हम किसानों का तो हित इस बात में है कि उसको ठीक दर पर बैंकों से रुपया कर्ज मिले, उनकी जरूरत की चीजें ठीक कीमत पर मिले और दवाइयों के अंदर, बीज के अंदर मिलावट न हो । तो मैं समझता हूं यह जो प्रस्ताव इन्द्र-दीप सिंह जी ने रखा है उसको डिसकस करने के बाद सरकार सोच समझ कर कुछ किसान के हित में काम करेगी, तभी देशका बड़ा भारी फायदा हो सकेगा । धन्यवाद ।

SHRI R. NARASIMHA REDDY (Andhra Pradesh) : Mr. Deputy Chairman, Sir, though this Resolution concerns agriculture only, I look upon this Resolution as one dealing with the entire economy of this country. When we look at the basic foundations of the present economy, the agricultural economy in our country, I feel that there is a grave imbalance in the entire economy. There are grave distortions. In the Resolution itself, it has been clearly stated that there are disparities between the prices of the agricultural products and the prices of the industrial products, between the prices of the agricultural products and the prices of the inputs and between the price which the producer gets and the price which the consumer is made to pay. Sir, if we superficially look at all these factors, we may not see any grave danger to our economy. But when we look deep into it, we see that this poses a real danger to the entire economy. The experience of many countries in the West and in the East has shown that neglect of agriculture, neglect of the agriculture economy, has proved ruinous to these nations. We should have learnt the lesson from these nations. But unfortunately for this country, we have not, so far, learnt the lesson. How can the industry thrive in a country in which the agricultural economy is still at its lowest ebb ? Please look at the picture in the country. Even today, if you go to the villages, the villages are found to be sinking, economically, socially and culturally. But the cities are thriving. They are thriving and growing at the expense of the village economy. With the blood sucked from the village economy, the cities are growing with their own attendant problems of shims, goondaism, social and political complications. This is a lesson which we should have learnt from the countries which have gone in that direction. Unfortunately, we have not, and to my knowledge and belief, except saying some good words about agriculture, I do not see the good sentiments being practised, fake, for instance, the question of prices. If you take the prices of foodgrains at the time when the producer gets his harvest, they are stuck up at the lowest. The small farmer, the poor farmer has no power of retention; he has no control over the market His economy compels him to rush to the market and sell at a distress price.

We say we have given support price. When is the support price given ? The medicine is administered after the patient is dead. After the poor and small farmers' produce is taken away from them due to the compulsions of economy, you say that the support price is given. This has been the history of support price. In Andhra Pradesh, last year, foodgrain producers not only did not get a fair price but in many areas there was no purchaser. In that connection I wrote to our revered Agriculture Minister, Babuji and to the Prime Minister that in this situation when there is no buyer, when your Food Corporation does not have the machinery to buy from all the small and poor farmers not to have these zones and to abolish these zones at least and that will at least bring a purchaser for the grains. They said that in the interests of procurement the zones cannot be abolished. Sir, I was not able to see the reason behind it. When we are self-sufficient, when you say that we have a bumper crop, what is the necessity of these artificial food zones as if this country is several countries ? If there is a deficit let us all suffer; if there is a surplus let us all enjoy it. We all know how these food zones are operating. They have only become a means of smuggling and black-marketing and to those officials who manage them, it is a welcome festival.

Sir, take cotton, for example. In Andhra Pradesh, which was not a big cotton-producing State, our Agriculture Department supplied new seeds and asked the peasants to grow cotton. They took it up very well and in Gunlur district alone a few lakh acres of cotton alone was sown and a bumper crop came. What happened afterwards ? There was no buyer. They had invested thousands of rupees of money; they had brought loans. How could they repay them.

SHRI DEORAO PATIL (Maharashtra) v For the production they were congratulated by the Minister !

SHRI R. NARASIMHA REDDY: My information is that, like this, in some other States like Punjab, Haryana and Maharashtra production of the cotton crop increased very well. But what is the position today ? This year they have all stopped growing cotton. Why ? Who is responsible ? Is

it not our bad planning and bad economy ? They could not get the price. We encouraged the poor peasant to grow cotton but when he could not get a buyer we did not go to his help. After a great agitation the Cotton Corporation of India was started— and for what purpose it was started, God alone knows. This was asked to purchase the cotton but the Finance Ministry gave it only about ten crores of rupees. What can be done with that ? A deferred payment system was introduced. Can the deferred payment system be accepted by all the creditors of the small and middle farmers ? Will they agree to it ? They will demand the payment. Therefore they gave it up and today we have to import cotton. We have produced about 70 to 75 lakh bales. But today we have once again to import cotton. See this fluctuation because of the non-implementation of our policy.

In this connection, I would like to. read out to you the relevant portion of the Congress Working Committee's Resolution regarding this—

> "Next only to foodgrains, the policy in regard to production and distribution of textiles is of crucial importance to the masses. The two components of textile policy that have either been neglected or have proved ineffective in the past relate to eliminating speculative practices in regard to purchase of cotton on the one hand, and a check on the proliferation in the variety of textiles produced and that too increasingly of an elitist orientation, on the, other. Thanks to advances in the technology of cotton production, it is possible for us to produce adequate cotton to clothe our masses and to step up exports. Based on a remunerative price fixed for the grower, a range of minimum and maximum cotton prices for the mills should be worked out and...

Please note.

> ". . .enforced in order to eliminate unhealthy and speculative practices in the supply of cotton to the mills. Procurement through public and co-operative agencies should be stepped up. Varieties of textiles should be drastically curtailed and ceiling prices for cloth fixed based on yarn count."

This was on the 25th of May, 1974 and we are in 1976 now. How far has this been implemented ? Till now the price of cotton is not fixed. And by the time the price is fixed, the poor farmer would have sold away his cotton. And by the time it goes to the mills, the price is very much raised. Therefore they say that the cotton price is more and our cloth price is also more. On the one side, the consumer has to pay more price and on the other side, the producer gets very little; in between, the middleman gets the lion's share. This is the case in regard to foodgrains, this is the case in regard to cotton and this is the case in regard to all the other commodities that the agricultural sector produces. Unless we eliminate these middlemen who are sucking the blood both of the consumer and the producer, agricultural economy will not improve in this country. And if the agricultural economy does not improve, the whole economy of the country will once again get back to a stragnant stage, ana i need not tell you the effect of the agricultural economy on the industrial economy. All our thinkers have said—Mahatma Gandhi had said—that rural India lives in the villages, in India's seven lakh villages. What is happening to our seven lakh villages ? The only test is, if the agricultural sector is improving, the villages are improving. And there would not have been a migration of the population from the villages to the cities; on the other hand, there would be a migration from the cities to the villages. But even today, the village population is coming into the cities creating problems here and pauperisation there—pauperisation of the countryside and luxury in the cities. This is the position to which our economy has come to.

Sir, it is a question of having your sights clear. It is no good merely saying that agriculture is good and it has to be developed. The whole planning and the whole thinking must concentrate on the development of agriculture. If only this had been done earlier even at (he time we achieved our freedom, we need not have gone to so many countries like the USA requesting them to give us grains. How many crores of rupees we have spent in foreign exchange for the purchase of foodgrains ! If only we had developed our agriculture, we need not have wasted so much of foreign exchange; we could have, on the other hand, earned more foreign exchange for this country. So this problem of prices takes us to the basic problem of the Indian rural economy.

Finally, Sir, I would like to make just one simple suggestion which I think the Minister will appreciate. At least now, when you fix the prices, what is the difficulty in fixing the prices just after or before the sowing season ? Give the peasant, the grower, a confidence that his produce will be purchased. In this country we may not be able immediately to implement the crop insurance scheme; it ?s a huge country. The Government mast create enough machinery, whether through the co-operatives or otherwise, to give a confidence to the small and marginal farmers that their produce will get remunerative prices. Otherwise you all know about the rise in the cost of inputs. I need not repeat it. The fertiliser prices, the prices of pesticides, the prices of seeds, the cost of electricity, the

cost of diesel oil, everything has gone up. Over and above this, our State Governments in every State have not only increased the electricity charges but have increased the commercial crop taxes and the water cess also. All these burdens have increased. This is the situation. Therefore, please give confidence to the producer. If that is not done, what happened in cotton is going to happen in other commodities. Today in my area where paddy is grown, not under irrigation from projects but from wells and small tanks, people are giving up paddy and are going in for other crops. This is bound to happen because our economy does not assure them of a remunerative price. Unless this outlook, this attitude—what is more important is the attitude, not the details—is revised by the Government, unless our sights are clear, the sights towards the seven lakh villages where rural India lives, our economy will not prosper. I am sure our Agriculture Minister and our experienced Mr. Shinde will note this and do their best in this matter. Thank you.

SHRIMATI AMARIIT KAUR (Punjab) : Mr. Deputy Chairman, Sir, the hon. Member who has moved this Resolution has made several interesting points regarding some basic difficulties our agriculturist has had to face in the past and is still facing today. I would like to make a few observations on some of the points put forward by the hon. Member.

Fixing of the price for agricultural produce today is left totally in the hands of the Agricultural Prices Commission, whose members are eminent economists only and take advice from a panel of 21 farmers and four MPs. before making their financial decision regarding the prices of farm produce. It was on the 20th April this year that one farmer was inducted into the APC. Farmers are happy at this slight concession given to them, though they would very much have liked further inclusion of two more practical farmers from States contributing the maximum to the Central pool and more so, some eminent Vice-Chancellors of agricultural universities of Ihis country. I strongly feel that until this is done, there will never be a proper balance in the price structure of agricultural produce where the producer and the consumer can live in harmony. The question is how does the APC come to its price conclusions ? We are told that the APC goes into the total price structure of the farmer's inputs. I have often wondered if the APC has ever considered that the total input of the future crop is taken from the output of the present crop and is to be assessed along with other inputs in the present crop. The other consideration is whether any economical assessment is made of the amount of effort and energy hours put in by a farmer in ratio to proportionate effort and energy hours put in for the production of industrial goods. If the APC does take these two aspects within the scope of inputs of the farmer, then why is this poor farmer always in debt ? We find the farmer constantly taking loans from banks at extremely high rates of interest—may be the APC leaves no scope in its quoted price of grains for improvement of the farmer's living condition or the improvement of his farm for progressive production. The farmers cannot remain stagnant, though APC prices sometimes force him to do so. So, we see him taking bank loans with crippling rates of interest to buy seed, fertiliser, loans for labour wages, for the sinking of tube-wells, buy motors, pumps, engines, thrashers, tractors and all their various implements, and loans even to run his household, even though the money is meant for some other purpose. He accumulates such huge debts with the bank, thinking he will pay it back after the sale of his crop; but all he manages to do is to pay off the interest of the loan he has taken. The farmer is now in a vicious grip. He stands to lose his land and go to jail. These bank loans which were good schemes and were supposed to put the poor farmer on his feet are now putting him behind bars and auctioning his land. Now we see these farmers get into a void of recurring debts. They in a way become slaves to the bank just because they had that laudable idea of becoming progressive farmers and wanted to uphold the policy of 'Grow More Food'. This, Sir, is another aspect of "rural indebtedness" which touches, this time the grower and the producer. There is either something drastically wrong with the implementation of these schemes, or else the prices of inputs and interest rates have gone so high that the agriculturists are unable to pay back.

The question arises as to what help does this indebted grower and producer wani from the Government ? He wants psycho logical encouragement and incentive foi greater production. Because he is a simple and mostly an uneducated person, he want; plans that are simple so that he can understand them. He wants the assurance fha his toil in sweat and blood will be appre ciated and that the production of his labou will be paid in remunerative prices. Ht just wants to be known as a land owne and not as a Kulak or a landlord just be cause he holds maximum land within th< ceiling limit. If he holds less then bi wants to spend his hard earned money tc buy a few more hectares within the limi to improve his lot. He wants to be judget by his performance in the field. He want that the Government should help him ti mechanise his farm so that he can contri bute handsomely to the Grow More Foe Campaign. He complains that the price of tractors, implements and spare part have increased 90 to 115 per cent fror

1970 to 1975. He claims that he would not dare take a bank loan because the bank rate of interest has also gone up from 9i per cent in 1970 to even 18 per cent in 1976. The farmer had noted that the Finance Ministry had manoeuvred a concession on items used in tractors bringing down the total price a full one per cent as against items such as T.V. sets, water coolers, etc., which had at the same time been brought down 5 to 35 per cent. The farmer has been wondering ever since what yardstick was being used by the Finance Ministry to measure priorities in the field of necessities.

The farmer agree that the margin between the purchase and the sale price of his produce should be reduced to 15 per cent, because he is always blamed by the non-agriculturist consumer for being responsible for the high prices in foodgrains and becoming rich at their expense. This misunderstanding in the mind of the city consumer has led to the habit of fleecing the poor uneducated farmer when he goes to town to buy his daily necessities.

There is a general agreement amongst the farmers that the land revenue charged by the Government is generally fair and nominal and that their paying of it gives them a sense of participation and confirms by the Government the ownership of lands in their names. The only thing they ask is that the total land revenue of an entire village be handed over directly into the bank account of the Panchayat for the improvement of the village itself. I agree with the hon. Member that the electricity and water charges have increased too much in the last five years, the increase has been to the tune of over 70 per cent. The farmers feel that the reduction in fertiliser prices was so small that they are still unable to put in the optimum doses that should be put into their crops, thereby creating less production.

The hon. Member has made a mention of concession that should be given to the poor and middle level farmers. I agree that all small and marginal farmers must be given priority in all development schemes. I know it for a fact that these small and marginal farmers are being helped tremendously by State Governments through agencies created exclusively for them. Here I would like to suggest that small and marginal farmers should not only be judged by the measurement of lands they hold, but also by the quality and the productive capacity of the land itself. For instance, a fully irrigated three hectares of land can produce in a year the total annual production of seven or more hectares of land in dry farming areas and during times of drought, even more so. Now the three hec-] tare-owners have been brought because of their small holding under the category of marginal farmers. Therefore, I feel that ' farmers in totally dry areas should also be brought under the category of marginal farmers and should be given developmental aid just as the present marginal farmers are given.

The hon. Member, by moving this Resolution, has highlighted some of the major problems faced by our farmers today and we all share these views and ideas generally.

Thank you.

श्री बापूरावजी मारुतरावजी देशमुख (महाराष्ट्र) : उप सभाध्यक्ष महोदय, इस सदन में श्री इन्द्र दीप सिंह जी एग्रीकलचर प्राइस के बारे में जो रिजोल्यूशन लाए हैं उस पर हम लोगों को चर्चा करने का मौका मिला है। मैं इसके लिए उनको धन्यवाद देता हूं। देश में एग्रीकल्चर लोगों की हालत दिनों-दिन कमजोर होती जा रही है। कहा जाता है कि देश में अभी तक पंचवर्षीय योजना बनाई गई हैं वे सभी किसानों, मजदूरों के फायदे के लिए होती हैं। लेकिन देखा जाए तो इतनी प्लानिंग होने के बाद भी किसानों की हालत क्यों बिगड़ी है और वे क्यों कमजोर हुए हैं इसका कारण भी हमें सोचना पड़ेगा। आपको मालूम है कि इस देश की जो कुल आमदनी है उसका 50 परसेन्ट जो उत्पादन है वह इनकम खेती का है और 50 परसेन्ट जो इनकम है वह इंडस्ट्री की है। परन्तु 50 परसेन्ट इनकम खेती से पैदा होती है उसमें 80 परसेन्ट लोग काम करते हैं और 50 परसेन्ट इनकम इंडस्ट्री से होती है उसमें 20 परसेन्ट लोग ही काम करते हैं। लेकिन 20 परसेन्ट लोगों को सरकार की तरफ से प्रोटेक्शन दिया जाता है। और उनके इंडस्ट्रीज के भाव भी बराबर मुकरर सरकार से किए जाते हैं। लेकिन 80 परसेन्ट लोग खेती पर निर्भर होते हैं। उनके भाव उचित नहीं निर्धारित किए जाते हैं। उनकी माली हालत खराब हो जाती है। किसानों के माल के भावों के बारे में सरकार ने एग्रीकल्चर प्राइस कमीशन मुकरर किया है--अभी एग्रीकल्चरल प्राइस कमीशन के बारे में भी यहां काफी चर्चा हुई, इसलिए

मैं उसकी चर्चा नहीं करना चाहता। लेकिन हरेक जिले में एग्रीकल्चर फार्म गवर्नमेंट ने खोले है वह एग्रीकल्चरल फार्म पर खेती का भाव पैदा करने के लिए कितनी लागत लगती है, खर्चा जोड़ने के बाद यह मालूम किया जाए कि उसके उत्पादन पर कितना खर्चा आता है। लेकिन वह जोड़ा नहीं जाता है। बैठे बैठे एग्रीकल्चरल प्राइस कमीशन जो भाव निर्धारित करते हैं वही एग्रीकल्चर के उत्पादन का भाव किसानों और लोगों को दिया जाता है, और इसका कोई सही भाव निर्धारित नहीं होता।

†[**The Vice-Chairman (Shri Ranbir Singh)** in the Chair.]

दूसरी बात, अब आप इंडस्ट्री के बारे में देखिए कि उसमें क्या होता है। इंडस्ट्री वाले पूरी इंडस्ट्री, मशीन की कीमत, उसका ब्याज, कच्चे मालों की कीमत, मजदूरों की मजूरी, फिर उसके बाद प्राफिट जोड़ कर उसे उत्पादन का वास्तविक मूल्य निर्धारित करते हैं। तो इंडस्ट्री में वह अपना उत्पादन और अपने उत्पादन के लिए लगा हुआ खर्चा और उसके बाद अपना मुनाफा लगाकर वह माल बेचता है। लेकिन किसान के बारे में ऐसी कोई व्यवस्था नहीं है। किसान को बिल्कुल हवा के ऊपर छोड़ दिया जाता है क्योंकि मार्केट में व्यापारी जो भाव मुकरर करते हैं वही भाव उसको मिलता है।

महाराष्ट्र सरकार ने तीन चार वर्षों से किसानों को कपास के भाव बराबर मिलने के लिए काटन मोनोपली स्कीम चालू की है। किसानों के कपास का भाव उचित मिलने के बारे में यह योजना बनाकर संरक्षण दिया है। और यह योजना चलाने के लिए फाइनेंस मिनिस्ट्री से रुपये की मांग की है। वैसे रिजर्व बैंक से तो रुपए की मांग की है। लेकिन किसान की कपास योजना चलाने के लिए महाराष्ट्र सरकार को रुपया नहीं दिया जाता। पैसा दिया गया तो इनफ्लेशन बढ़ता है। ऐसी सबब बनाई जाती है। किसानों के भावों के खरीदने के लिए पैसा दिया तो इनफ्लेशन कैसे बढ़ता है। यह हमारी समझ में नहीं आता है। ...इसका कारण क्या है ? किसानों की तरफ देखने का दृष्टिकोण ही गलत है और इंडस्ट्री की तरफ देखने का दृष्टिकोण अच्छा है। उसी का प्रभाव आज हमें यह दीखता है। तो मैं यह जरूर कहूंगा कि अग्रिकल्चर मिनिस्ट्री को देखना चाहिए कि इस देश के 80 फीसदी लोग खेत के ऊपर काम करते है, वहीं रहते है, सारा जीवन उनका वहीं व्यतीत होता है तो उनकी हालत अच्छी रहे। बगैर खेत के मजदूर भी अच्छा नहीं रह सकता। आप मिनिमम वेज देना चाहते हैं और मिनिमम वेज देने की जो बात आई है, वह देना चाहिए, उसके बारे में किसी का दुम्मत मत नहीं हो सकता है। लेकिन अगर किसानों में ताकत नही रहेगी और आपने उन पर मिनिमम वेज का भी कायदा लागू किया तो किसान कहां से दे सकेगा यह भी सवाल आपके सामने है। इसलिए जरूरी है कि किसान जो माल पैदावार करता है, उसके भाव ऐसे निर्धारित करने चाहिए कि वह धंधा भी प्राफिटेबिल होना चाहिए। किसानी अगर प्राफिटेबिल धंधा नहीं होगा तो किसानों की माली हालत दुरुस्त नहीं हो सकती है और वे पनप भी नहीं सकते, यह मुझे कहना है। अभी आप देखिए कि किसानों के माल को पैदा करने के लिए इनपुट्स लगते है उसका क्या भाव है जिनके जरिए किसान माल पैदा करता है ? दो तीन वर्षों के पहले फर्टिलाइजर के जो दाम थे वह एकदम दुप्पट बढ़ा दिए. फर्टिलाइजर 1100 रु० टन मिलता था उसके एकदम से 2200–2300 रु० दाम हो गए। जिस दिन यह मालूम हुआ उसी दिन से फैक्ट्रियों ने दाम बढ़ा कर लाखों-करोड़ों रु० कमा चुके। लेकिन अभी जो 120 रु० दाम घटाए तो उसका फायदा किसानों को तुरन्त नहीं मिला और कहते है कि फैक्टरी के पास आर्डर नहीं आया। चाहे किसानों के बारे में हो या कंज्यूमर के बारे में हो, जब भी भाव बढ़ता है तो वह

भाव बढ़ने के बाद एकदम उसी दिन से लागू हो जाता है लेकिन जहां भाव कम हुए तो उसका असर दो-दो, तीन-तीन, चार-चार महीने तक नहीं दिखाई देता है। आज महाराष्ट्र में इरीगेशन प्रोजेक्ट कितने हैं, कितनी जमीन इरीगेशन के नीचे है, आज तक कितनी जमीन इरीगेशन के नीचे आई है? अगर कोरउवाह जमीन में उनको पैदा करनी पड़ेगी तो फसल कहां से होगी। तो अगर उनके लिए भाव की तपावट वैसी की वैसी रखी तो उनकी हालत कभी सुधरने वाली नहीं है, वह जैसी है वैसी ही रहने वाली है। इसके बारे में आज जरूरत इस बात की है कि अनाज के भावों के बारे में और किसान को अग्रिकल्चरल प्रोड्यूस पैदा करने के लिए जो कीमत लगती है, जो इन्पुट्स लगते हैं, उनके भावों का विचार होना चाहिए। पहले इन्पुट्स के भाव देखे जाएं और फिर किसानों के माल के भाव देखे जाएं। मुझे लगता है आज इतनी तफावत है कि वे उनको ले नहीं सकते और अपनी पैदावार बढ़ा नहीं सकते और यही हालत आज देश में है। इसलिए मिनिस्ट्री इसके बारे में सोचेगी तभी मुझे लगता है किसान की हालत अच्छी हो सकती है नहीं तो जैसी आज हालत है उससे भी बुरी हालत हो जाएगी, कमजोर होती जाएगी। इसलिए आज जो ठहराव (रिजोल्यूशन) आया है उसको मैं सपोर्ट करता हूं।

श्रीमती लक्ष्मी कुमारी चूंडावत: उपसभापति महोदय, इस साल बड़ी अच्छी फसल हुई है, पिछले साल भी अच्छी फसल हुई थी, भविष्य भी हमें बड़ा सुन्दर नजर आ रहा है। इसके लिए हमें खुशी भी है और मैं बधाई भी देती हूं। बधाई कुदरत के साथ साथ मैं उन किसानों को देती हूं जिन्होंने कड़ी मेहनत से यह फसल पैदा की। साथ ही मैं सरकार को भी बधाई देना चाहती हूं जिसने कई प्रयास किए जिससे खेती की उपज में बढ़ोतरी हुई इतनी अच्छी फसल होते हुए किसानों के दिल में उमंगें उठनी चाहिए थीं, खुशी होनी चाहिए थी, लेकिन अफसोस के साथ कहना पड़ता है कि इस बम्पर क्राप के होते हुए इस साल और पिछले साल हमारे किसानों की माली हालत जैसी थी पहले के मुकाबले गिरी है। होना यह चाहिए था कि हालत बेहतर होती। इसका कारण यह है कि—मुझे क्षमा करें मंत्री महोदय, मैं कुछ स्पष्ट शब्दों में कहना चाहूंगी—कुछ सरकार की नीतियां ऐसी रहीं, कुछ सरकार की एजेन्सी ऐसी थीं। जिन्होंने एफीशियेन्सी नहीं दिखलाई। तीसरे सरकार की जो सही नीतियां थीं उनका वक्त पर इम्प्लीमेंटेशन नहीं हुआ। उसी का यह नतीजा हुआ। यह बिल्कुल ठीक है कि सरकार की नीयत, मंशा साफ यह है कि किसानों को खुशहाल किया जाए, अधिक से अधिक उनको फायदा पहुंचाया जाए, लेकिन इम्प्लीमेंटेशन न होने की वजह से, दिशा ठीक निर्धारित न होने की वजह से जो सरकार करना चाहती थी वह न हो पाया। पिछले साल का किस्सा मैं आपके सामने रखती हूं। पिछले साल जब बम्पर फसल हुई थी, खेतों में, खलिहानों में अनाज पड़ा था तब किसान उछल रहे थे उस बम्पर क्राप को देख कर लेकिन जब बाद में उसका कोई खरीदार नहीं था तब उनके दिल पहले जैसे उछल रहे थे वैसे ही नीचे गिरते जा रहे थे। स्थिति यही थी कि उस समय कोई खरीदार नहीं मिल रहा था। खरीदार जो मिडिलमैन था, व्यापारी वर्ग था उन्होंने सोचा कि इन भावों को डट कर गिरने दो और भाव डट कर गिरते रहे, किसान चिल्लाता रहा, पार्लियामेंट में उनके नुमाइन्दे आपके सामने इन बातों को रखते रहे, लेकिन वक्त के ऊपर कोई इलाज नहीं किया गया। बाद में सपोर्ट प्राइस घोषित की गयी, फूड कारपोरेशन भी खरीदने के लिए आया, लेकिन तब आया जबकि किसानों की फसल का बहुत बड़ा हिस्सा मिडिलमैन के घरों में, दूकानों में पहुंच चुका था। जब फूड कारपोरेशन ने खरीदा तो परेशानी देकर खरीदा, हेरासमेंट के साथ लिया जब भावों में काफी उतार-चढ़ाव आ चुका था। इसलिए किसानों को

फायदा नहीं मिला। जो गरीब तबके का, छोटे तबके का किसान था उस किसान को फायदा नहीं मिला क्योंकि उसके पास ऐसी शक्ति नहीं थी कि वह फसल को अपने घर में रख सके। बड़े किसान ने फिर भी रख ली, लेकिन जिस छोटे तबके के किसान को हम फायदा पहुंचाना चाहते थे उसको फायदा नहीं पहुंचा सके। आपकी नीति ऐसी रही है कि वक्त पर अनाज खरीदा नहीं जाता। उसका नतीजा यही होता है। आज से दो साल पहले हम अमरीका और आस्ट्रेलिया से सोने के भाव अनाज खरीदते थे। धतूरे के बीज मिले हुये अनाज के लिए भी हमने सोना दिया था। यह हम बर्दाश्त कर पाए लेकिन जो फसल हमारे घर में पैदा हुई, हमारे किसान ने बोई उसकी वाजिब कीमत नहीं दे पाए। मैं सोचती हूं। कि यह हमारी अपनी गलती थी। हम औरों के ऊपर इसका दोष नहीं डाल सकते। उपसभापति महोदय, आप खुद जानते हैं सरकार के यहां जब लेवी जमा करनी पड़ती थी तो उस वक्त बीच का आदमी किसान के घर पर जाकर सस्ते भाव पर खरीद लेता था और मंहगे भाव पर सरकार को बेच देता था। इस तरह हमारा किसान लूटा गया। क्या फूड कारपोरेशन के आप के इंस्पेक्टरों को पता नहीं था कि लेवी आ रही थी तो सीधे किसान के घर से नहीं आ रही थी, बीच का आदमी ला रहा था। इस तरह किसानों की गरीबी का अज्ञान का लाभ बीच वाले आदमियों ने उठाया और फूड कारपोरेशन जिसे आपने उनकी रक्षा को बनाया था, छोटे किसानों की रक्षा नहीं कर सका।

4 P.M.

यह तो हुआ उनको सस्ते दाम देने के बारे में, और दूसरी तरफ जो सुविधाएं हम किसानों को देना चाहते थे वह हम नहीं दे पाये। किसानों को आज कोआपरेटिव कर्ज देती हैं लेकिन उन के ब्याज की दरें बढ़ा दी गई हैं और वह 15 से 18 रुपये तक जा कर पड़ती हैं। जो बिजली उन को सिंचाई के लिए दी जाती है उस में होना यह चाहिए था कि वह उन को सस्ती से सस्ती दर पर दी जाए, लेकिन इंडस्ट्री वालों के मुकाबले में उन से दुगुने रेट चार्ज किए जाते हैं। इसी तरह से फर्टिलाइजर के भाव बढ़े। खाद भी ऊंचे दामों पर उन को खरीदनी पड़ी। ट्रैक्टर का दाम भी उन को ज्यादा देना पड़ा। अगर बाजार में ट्रैक्टर के दाम ज्यादा हो गये होते बात दूसरी थी, लेकिन उस पर तो ज्यादा एक्साइज ड्यूटी के कारण किसान को ज्यादा दाम देने पड़े। इसी तरह सिंचाई के रेट हैं। वह भी बढ़ा दिये गये हैं। इसी तरह से बीस सूत्री कार्यक्रम में जो काम करने वाले मजदूर थे उन की मजदूरी का रेट बढ़ा दिया गया। यह ठीक है कि वह ज्यादा होने चाहिए लेकिन उस का बोझ किसान पर ही पड़ा। जब आप इंडस्ट्री का हिसाब लगाते हैं तो मजदूरों का पैसा उस इंडस्ट्री से उत्पादित चीज की लागत में जोड़ा जाता है, लेकिन खेतों से पैदा किए हुए अनाज का दाम तय करने के समय उन मजदूरों की मजदूरी का हिसाब नहीं रखा जाता। तो यह ऐसी छोटी-छोटी बातें हैं जो किसानों की जिन्दगी के साथ जुड़ी हुई हैं। यह नजरिया बताता है कि आप कैसे सोचते हैं इंडस्ट्री के लिए और आप कैसे सोचते हैं किसानों के लिए। बिजली और लेबर के वेजेज की मिसाल दे कर मैं इस बात को आप के सामने रख रही हूं। इस के साथ ही मैं कहना चाहती हूं कि जब हम खेती की तरफ नजर डालते हैं तो क्या जो हमारे चाय बागान हैं क्या वे कृषि में शामिल नहीं हैं। यह मैं जानना चाहती हूं। यह चाय बागान बड़े-बड़े लोगों के हाथों में हैं, विदेशी कंपनियों के हाथों में हैं, हमारे यहां के करोड़पति लोगों के हाथों में हैं, लेकिन उन के नफे के बारे में आप का दूसरा नजरिया है। आप

आज जो असम में चाय पैदा होती है उस के मालिक को एक किलो चाय पर 5 रुपया नफा मिलता है। इस से बढ़ कर नफा शायद किसी दूसरी चीज़ पर नहीं है और जो इन का बैलेंस शीट पेश होता है उस में वे मालिक लोग चार रुपए किलो का नफा दिखाते हैं। तो बड़े-बड़े लोग चार और पांच रुपए किलो का नफा लें और जो हमारे देश का छोटा काश्तकार है, जो हमारे देश की रीढ़ की हड्डी है और सबको अनाज उगाकर खिलाता है उसको कुछ न मिले। आप के देश में लाखों डालर का अनाज आता था, वह बचा लेकिन उसका ख्याल नहीं रखा जाता, आप इस नज़रिए से सोचिए कि अगर चाय बागान वालों को इतनी रियायतें दी जाती हैं तो किसान को क्या रियायतें दी जानी चाहिएं। किसानों के लाभ के लिए तीन, चार कारपोरेशन बने हुए हैं। एग्रीकल्चर कारपोरेशन है, फूड कारपोरेशन है, सीड कारपोरेशन है, काटन कारपोरेशन है और उन सब पर मुझसे पहले बोलने वाले भाइयों ने काफी रोशनी डाली है इसलिए मैं उस बात को दोहराना नहीं चाहती। सीड कारपोरेशन से जिस तरह का मिलावटी बीज मिलता है और मंहगे दामों पर मिलता है वैसा अगर किसी दूकानदार से मिलता तो उस पर मुकदमा बन सकता है। लेकिन कारपोरेशन पर इस बारे में कोई कार्यवाही नहीं होती। चौधरी साहब ने जो बात कही वह बिल्कुल ठीक है। जब सरकार की किसी एजेंसी के काम में कोई गड़बड़ी होती है तो उस पर सख्त से सख्त कार्रवाई की जानी चाहिए।

SHRI ANNASAHIB P. SHINDE : She should bring to our notice specific instances so that we can take action.

श्रीमती लक्ष्मी कुमारी चूंडावत: इसी तरह से मैं आपके सामने काटन कारपोरेशन की बात रखना चाहती हूं। आज से कुछ साल पहले लांग स्टैपुल काटन हमने ईरान से मंगाई थी और वह इसलिए मंगाई थी कि हम उससे कपड़ा बनाकर फारेन करेंसी कमा सकें। यह बात अलग है कि हम उससे फारेन करेंसी नहीं कमा सके और वह यहीं के मिल मालिकों को दे दी गई और उस पर उन्होंने अटूट मुनाफा कमाया।

लेकिन, उपसभाध्यक्ष महोदय, जब हमारे मुल्क में उसी तरह का लांग स्टैपल काटन, बरा लक्ष्मी जैसी चीज़ हमारे वैज्ञानिकों ने निकाली जो इजिप्ट और ईरान के लांग स्टैपल काटन के मुकाबले में बहुत अच्छी थी तो उसकी कद्र नहीं हुई, उसको पूरे दाम पर नहीं खरीदा गया और किसानों, जिन्होंने उस पर पूरी मेहनत से पैदावार करके दिखाई उनका दिल टूट गया। बाहर हम रुपया भेजने के लिए राज़ी थे, फारन करेंसी में, लेकिन घर की चीज़ों की कद्र हम नहीं कर पाए। अभी ऐसा हुआ कि जब काटन पैदा हुआ तो उसके दाम एकदम गिर गए। लेकिन आपके काटन कारपोरेशन ने ये पता नहीं किसने ये आंकड़े पेश किए कि इस दफे काटन की इतनी अच्छी फसल हुई है कि उसका कोई खरीदार नहीं है, शायद 72 लाख बेल्स इस साल पैदा होगा इसका मतलब यह हुआ कि उसके भाव गिर गये। ज्यों ही वह रुई किसानों के घर से उठकर व्यापारियों के घर में गई तो आपके आंकड़े आये कि पुराना अंदाज़ गलत निकला, 66 लाख बेल्स ही हुई। फिर भाव ऊंचे चढ़ गये। फिर सरकारी आंकड़े कहते हैं कि वह भी गलती हुई है और 56 लाख बेल्स ही हुआ है। इसलिए रुई की कमी है और विदेश से मंगाएंगे तभी हमारा काम चलेगा। यह किस तरह का सर्वे था, किस तरह के आंकड़े थे, यह हमारी समझ में नहीं आया। उन आंकड़ों के आधार पर किसान डूब गये और आप कह रहे हैं कि हम बाहर से मंगायेंगे।

मैं आपके ज़रिए, माननीय कृषि मंत्री जी से निवेदन करना चाहती हूं कि ये छोटी-मोटी बातें नहीं हैं, ये देश

के अर्थ-तंत्र पर और लाखों करोड़ों किसानों के ऊपर भयंकर असर डालने वाली चीजें हैं।

तीसरे, मेरा नम्र निवेदन यह है कि खेती में जो चीजें पैदा होती हैं उनके भाव गिरे, लेकिन उनके मुकाबले में इन्हीं चीजों पर जो मैन्यूफैक्चर्ड गुड्स थे उनकी कीमतें कितनी गिरी हैं जरा उनका मुकाबला किया जाए, उनकी तुलना की जाए। उनकी तुलना करते हैं तो हैरानी होती है। जब खेती की चीजों की कीमतें बहुत नीचे गई हैं, वहां मैन्यू-फैक्चर्ड गुड्स की कीमतें या तो कम नहीं हुई हैं या बहुत ही कम हुई हैं। रूई का भाव तो बिल्कुल धरातल पर बैठ गया लेकिन रूई से जो कपड़ा बनकर आता है उसके दाम में कमी नहीं हुई। आजकल ही हमने धोतियों की कीमत बढ़ाई है। पिछले दफे के सेशन में यह तय हुआ था कि कपड़े की कीमतें कम हों; इसलिए एक एक दो दो मीटर के ऊपर व्यापारियों के यहां या कारखानों में छापे लगा दिए जाने चाहिए। अभी 10-15 दिन पहले दिल्ली के बाजारों में छापे लगाने का काम शुरू हुआ, इसलिए कीमतें भी बढ़ाई गई इसलिए कि छापे लगाए जा रहे हैं। क्या छापे लगाने पर इतनी कीमतें बढ़ जाती हैं? यानी इस तरह से आप रियायतें बराबर उनको देते जा रहे हैं। इसी प्रकार जो आइल-सीड्स हैं जिनसे तेल निकलता है, मूंगफली, सरसों, तिल आदि उनके भाव नीचे गिर गए, लेकिन इन्हीं के आधार पर जो वैजिटेबुल आयल बनते हैं उनकी कितनी कीमतें गिरती हैं? आज जो गुजरात सारे मुल्क को मूंग-फली सप्लाई करता है, पैदा करता है, आज उस गुजरात में उनको मूंगफली का तेल नहीं मिल रहा है, राशन कार्ड पर दिलाने का इंतजाम किया गया। यह क्या स्थिति है, क्यों हो रहा है? आपका जो नज़रिया है जो नीति है इंडस्ट्री वालों के लिए और खेती वालों के लिए इसमें इतना फर्क क्यों है? इंडस्ट्री के लिए आपने कई प्रकार की रियायतें दी हैं। जब भी वह कोई मसला लेकर आते हैं और अपनी दिक्कतें रखते हैं तो उनको आप कन्सेशन देते हैं, चाहे सेल्स में, चाहे ऐक्साइज़ ड्यूटी में छूट देते हैं। लेकिन बेचारे किसानों को किसी तरह की आप रियायत नहीं देते हैं। यह बात मेरी समझ में नहीं आती है। इस-लिए शायद आप यह करते हैं क्योंकि हमारा किसान अन-आर्गनाइज्ड है, हमारा किसान इगनोरेंट है, उसके पास कोई लीवर नहीं है जिससे कि वह किसी को दबा सके।

इधर जो इंडस्ट्री वाले हैं उनकी हर मांग पर सरकार झुक जाती है। अभी कल ही अशोक होटल में शक्कर के जो बड़े-बड़े सेठ हैं उनकी कांफेंस हुई तो जगजीवन बाबू ने उनको कुछ डांटा भी और लताड़ा भी लेकिन उससे होता क्या है। आज शक्कर के भाव एकदम बढ़ गए हैं। उनके ऊपर 15 करोड़ रुपए बकाया है। आप सब जानते हैं कि किसान के घर में अगर लगान का 15 रुपया भी बाकी है तो पटवारी कुर्की वगैरह करके वह रुपया वसूल कर लेता है लेकिन 15 करोड़ रुपए आपसे वसूल नहीं किए गए। यह सवाल एक दफ नहीं इस सदन में 25 सौ बार आय है लेकिन उनके ऊपर कोई एक्शन नहीं लिया गया और 15 करोड़ रुपए प ब्याज वे लोग खा रहे हैं। जब तक इ कारखानों को अपने हाथ में नहीं लें तब तक जो शक्कर की समस्या है व सोल्व नहीं हो सकती। अभी महीने भ पहले जब बरसात खिंच गई एक हप 10 दिन पीछे, तो खाने

चीजों के दाम एकदम बढ़ गए। मैं समझ नहीं पा रही हूं कैसे इसके भाव उठ गए। अगर बरसात नहीं होती, अकाल पड़ जाता तो उसके परिणाम भी हमारे देखने में अक्तूबर, नवम्बर तक आते। लेकिन बरसात लेट होने के कारण ही जुलाई, अगस्त में चीजों के दाम बढ़ गए। मैं पूछना चाहती हूं आखिर इनके ऊपर कंट्रोल करने के लिए आपके पास क्या है? यह कंट्रोल आपसे ने क्यों नहीं होता? मैं साफ शब्दों में कहती हूं कि इसका एक ही तरीका है और वह तरीका यह है कि जो खाने की चीजें हैं—चाहे ग्रेन हो, शक्कर हो, चावल हो, आयल हो, रुई हो—सब का व्यापार सरकार अपने हाथ में ले ले। मैं समझती हूं तब इन सब चीजों के भाव घट सकेंगे। मैं तो यह भी कहूंगी कि जो भाव आप मुकर्रर करें वे तीन साल के लिए मुकर्रर करें। गेहूं के भाव तो आप तय करें वह भी तीन साल तक के लिए होने चाहिएं, कोटन के भाव भी तीन साल तक के लिए तय होने चाहिएं। किसान खुद देखेगा कि उसको किसमें फायदा रहता है। मुमकिन है आपको ही फायदा हो जाए। नुकसान भी हो सकता है लेकिन फिर भी उतना नुकसान नहीं होगा जितना आपको बाहर से अन्न मंगाने पर होता है, और अगर होगा भी तो वह आपके ही मुल्क में रहेगा, बाहर नहीं जाएगा।

इसके साथ-साथ मैं यह भी कहना चाहती हूं कि डिस्ट्रिब्यूशन के लिए एक मजबूत प्रणाली कायम करनी होगी। जो प्रणाली अभी कायम है उसको रेकोग्नाइज किया जाए। जो असेंशियल कोमोडिटीज हैं उनको सरकार अपने हाथ में ले और उनका वितरण करे। इसके अलावा कोई दूसरा रास्ता नहीं रहता। आप चाहे जितना इन लोगों को धमकाएं, चाहे जितना वे आपको एश्योरेंस दें, चाहे जितने भी कानून बनाएं लेकिन होगा यही कि तुम डाल-डाल और मैं पात-पात। इस सब के लिए जरूरी है कि आपको एक ठोस नीति बनानी होगी। अब समय है जब आप इन चीजों को हाथ में ले सकेंगे। पिछला जमाना भी अच्छा गुजरा है और आगे का जमाना भी अच्छा नजर आ रहा है। हमारी खुशकिस्मती है कि हमारे जो कृषि मंत्री हैं वह भी ऐसे हैं कि उनके आने के बाद इसमें जान आ गई है। हम लोगों में भी विश्वास पैदा हुआ कि उनके आते ही कुछ हुआ और भविष्य में भी होता रहेगा।

†[**The Vice-Chairman (Shri Lokanath Misra)** in the Chair.]

उपसभाध्यक्ष जी, मैं ज्यादा वक्त न लेकर मंत्री जी से इतना ही निवेदन करूंगी कि आप छोटा-मोटा इंजेक्शन न लगाइए, छोटी-मोटी दवाएं न बांटिए। इनसे कुछ नहीं होने वाला है। इसका तो आपको बड़ा आपरेशन करना पड़ेगा तभी समस्या सुलझ सकेगी।

श्री देवराज पाटिल (महाराष्ट्र): उपसभाध्यक्ष जी, मेरे मित्र श्री इन्द्रदीप सिंह ने इस सदन में जो महत्वपूर्ण संकल्प पेश किया है उसके लिए मैं उनको हृदय से धन्यवाद देता हूं। मैं उन माननीय सदस्यों को भी धन्यवाद देता हूं जिन्होंने इस प्रस्ताव का हृदय से समर्थन किया है और ऐसे भी सदस्य हैं जिनका पहला भाषण इस सदन में हुआ और पहले ही भाषण में उन्होंने इस प्रस्ताव का समर्थन किया और लाखों किसानों की समस्या के बारे में अपने विचार प्रकट किये।

उप-सभाध्यक्ष महोदय, इस प्रस्ताव पर जो विचार प्रकट किए गए हैं जो बातें प्रस्तावक महोदय ने कही हैं

उन मुद्दों को मैं दोहराना या उनकी पुनरावृत्ति करना नहीं चाहता हूं। लेकिन प्रस्ताव में दो तीन बातें प्रमुख रूप से कही गई हैं। पहली बात इस संकल्प में यह कही गई है कि कृषि उपज के लिए लाभकारी मूल्य सुनिश्चित किए जाएं। मेरे ख्याल में मंत्री महोदय भी इस बात से डिफर नहीं करेंगे। सरकार की नीति है कि the farmer should get a remunerative price for his produce. दूसरी उन्होंने यह मांग की है कि कृषि तथा औद्योगिक वस्तुओं के मूल्यों के बीच में समता सुनिश्चित की जाए। तीसरी बात उन्होंने यह कही है कि वस्तुओं का वाणिज्यिक व्यापारिक प्रबन्ध कम करके राज्य व्यापार के जरिए से इसका प्रबन्ध हो। ये सब बातें कई सालों से कही जाती रही हैं। मंत्री महोदय भी सिद्धान्त रूप से इनसे सहमत हो जाते हैं और इन तथ्यों को मान लेते हैं। लेकिन इन बातों पर अमल नहीं होता है। इसलिए यह बात हमारी समझ में नहीं आती है कि ऐसा क्यों होता है। हमारे देश में पूंजी में जो वृद्धि हो रही है उसके 40 प्रतिशत पर बड़े-बड़े पूंजीपतियों का नियंत्रण है। पार्लियामेंट के सब सदस्य और माननीय मंत्री महोदय भी इस राय के होते हुए भी यह बात बनती नहीं है। इसका कारण यह है कि पूंजीवादी अर्थ व्यवस्था का यह नियम है कि ग्रामीण क्षेत्र में उत्पन्न अधिशेष, व्यापार के माध्यम से, जिन्स के परिचालन के माध्यम से और जिन्स के विनियम के माध्यम से खींच लिया जाये। देहातों में जो प्रोडक्शन होती है उसको ये लोग तीन माध्यमों से खींचना चाहते हैं। इनका उद्देश्य होता है कि देहाती क्षेत्रों की चीजों को खींचकर उद्योगों की तरफ लगाया जाए। शहरों का विकास करना ही इनका मुख्य उद्देश्य होता है। इसी सिद्धांत के आधार पर हमारी व्यवस्था चल रही है और हमारी मंडियों का कारोबार भी इसी आधार पर चल रहा है। जब किसान अपनी फसल बेचने के लिए मंडी में आता है तो उससे पूंजीपति कम मूल्य पर खरीद लेता है। हमारे देश के अन्दर बड़े-बड़े ट्रेडर्स और पूंजीपति मंडियों पर अपना कब्जा किए हुए हैं। हमारे देश के अन्दर जमाखोर, मुनाफाखोर और सट्टेबाज लोग किसानों से कम मूल्य पर कृषि जन्य चीजों को खरीद लेते हैं। यह ठीक है कि आज मंडियों के लिए रेगुलेशन भी बने हुए हैं, लेकिन वास्तविक स्थिति यह है कि मंडियों के प्राधिकारी और मंडी कमेटियां इन पर नियंत्रण नहीं कर सकती हैं। इन मंडियों पर नियंत्रण बड़े-बड़े पूंजीपतियों द्वारा ही किया जाता है। हमारे देश में हालत यह है कि पूंजीपति लोग कटाई के समय किसान की चीजों के दाम तो कम कर देते हैं लेकिन कंज्यूमर को उन्हीं चीजों को अधिक भाव पर बेचते हैं। इसका असर आज हमारे देश में यह हो रहा है कि एक तरफ तो किसानों को कम मूल्य दिया जाता है लेकिन दूसरी तरफ कंज्यूमर से ज्यादा दाम लिया जाता है। इसका असर हमारे देश में यह भी हो रहा है कि कृषिजन्य वस्तुओं का मूल्य दिन प्रति दिन घटता जा रहा है।

मेरे से पूर्व बोलने वाले कई वक्ताओं ने बताया कि कपास के प्राइसेज नवम्बर में 2 हजार प्रति गांठ थी, आज वही प्राइस 4 हजार हो गई। किसान जो अपनी कृषि उपज मार्केट में लाता है, उसका मूल्य कम हो जाता है। वही उपज जब व्यापारी के पास पहुंचती है, उसके मूल्य बढ़ जाते हैं। यह प्रक्रिया

आज 25 साल से चल रही है। इससे मूल्यों में अत्यधिक उतार-चढ़ाव होते हैं और कृषि जिंसों में इस तरह का उतार-चढ़ाव सबसे अधिक होता है। कपास का उत्पादन लीजिए। गत नवम्बर में जिस कपास का मूल्य 2 हजार रुपए प्रति गांठ थी आज वह 4 हजार रुपये गांठ हो गई है इस तरह से कपड़ा मिलों के स्वामी, कपास उगाने वाले, गिरणी में काम करने वाले कामगारों, छोटे-छोटे बुनकरों, जिनको धागा चाहिए और वह उपभोक्ता जो कपड़ा खरीदने वाले अभी तक सबका शोषण करते रहे हैं। कपास में अभी भी सट्टेबाजी चल रही है जिसका प्रभाव कपास और कपड़े के मूल्य ढाँचे पर पड़ा है। सरकार की ओर से इसकी पूरी व्यवस्था है, जैसा कि मैंने ऊपर बताया कि किसान का उत्पादन शहरी जनता को उचित दर और नियंत्रित मूल्य में मिले।

दूसरी व्यवस्था है कि इनके पास, किसान के पास जो माल है, रा-मैटीरियल है बराबर नियंत्रित दर से ला कर के मिल वालों को उत्पादन के लिए मिले, लेकिन इसमें किसान को वाजिब मूल्य ही मिले इसकी पर्याप्त व्यवस्था सरकार के पास नहीं है।

औद्योगिक वस्तुओं के मूल्य के बारे में और उसके वितरण के बारे में सरकार का कोई नियंत्रण नहीं है। उद्योगपतियों द्वारा अर्जित किए जाने वाले लाभ को स्वयं निर्धारित करने के लिए कोई खास नए मास कदम नहीं उठाए गए हैं। हमने कई दफा कहा है कि उनका जो मुनाफा है, प्राफिट है उसमें कुछ नियंत्रण आप लगाएं। उद्योग की पूंजी, लाभ और घाटे के संबंध में जांच नहीं की जाती है। कास्ट आडिट उसका नहीं हो सकता है। परिणाम यह होता है कि सामान्य रूप से उन मूल्यों में वृद्धि होती है। ग्रामीण उपभोक्ताओं के लिए दो किस्म की समस्या होती है, इसलिए हमको दो तरह की समस्याओं का सामना करना पड़ता है, एक तो कृषि उपजाने वाले किसानों और दूसरे उपभोक्ताओं का। पहली समस्या यह है कि कृषि जिन्सों का मूल्य और औद्योगिक जिन्सों का मूल्य में अन्तर हो जाता है और दूसरे कृषक अपने माल को जितने मूल्य पर बेचता है और उपभोक्ता के नाते उस माल को खरीदता है, उसमें बहुत अन्तर होता है। इसलिए कृषि और औद्योगिक उत्पादन मूल्यों में तालमेल की जरूरत है। यह हमारे संकल्प के अन्दर मांग की गई है और उसके बारे में अगर मासवारी बुलेटिन देखी जाए तो खाद्य वस्तुओं के मूल्य में 25 प्रतिशत की कमी हुई है। परन्तु इसी अवधि में औद्योगिक जिन्सों में दो प्रतिशत की वृद्धि हुई है इसकी पुष्टि उद्योग मंत्रालय ने भी की है।

A review of Ihe price trends by the Ministry of Industry shows that the manufacturers have not kept pace with the downward trend. Whereas the fall in the prices of food articles during the calendar year 1975 has been 11.2 per cent.and that of industrial raw materials 20.6 per cent, the drop in the prices of manufactures was only 1.4 per cent. Sir, if this imbalance is not rectified, the terms of trade between agriculture and industry may be upset.

इसकी पुष्टि एग्रिकल्चर मिनिस्ट्री ने भी की है, दूसरी बुलेटिन में। 1975-76 में खाद्य वस्तुओं के भाव 4-5 प्रतिशत और औद्योगिक कच्चे माल के मूल्यों में 18.5 प्रतिशत की गिरावट आई। किन्तु तैयार शुदा माल के मूल्यों में 6 प्रतिशत की गिरावट दर्ज की गई है।

इस लिए हमारी मांग यह है कि विवेक सम्मत मूल्य नीति अपनाने की

आवश्यकता है। इसका समर्थन हमारे कामर्स के डिप्टी मिनिस्टर ने डकार कांफ्रेंस में किया था। वहां भी उन्होंने इसकी पुष्टि की थी। यानी, डकार में जो कांफरेन्स हुई उसमें उन्होंने पुष्टि की, लेकिन यहां उसका इम्प्लीमेन्टेशन नहीं होता।

In the United Nations Conference on Trade and Development Mr. V. P. Singh, Deputy Commerce Minister said : in the meeting of third world countries at Dakar that an index for raw materials prices and finished goods prices should be worked out with a view to have a link between the two in which the raw materials will get

fair price. यानी, गवर्नमेंट भी यह बात मानती है लेकिन कच्चे माल के उत्पादन पर और पक्के माल के उत्पादन पर कोई लिंक ड्रा करने की कोई कोशिश नहीं की है।

सरकार की नीति के बारे में हमारे कई सदस्यों ने टीका टिप्पणी की है। मैं अभी, प्रैक्टिकली दो-तीन बातें जो हुईं, उसके बारे में कहूंगा। लोग कहते हैं सरकार की कैसी अजीब नीति है। मूंगफली का तेल लीजिए। पहले मूंगफली निर्यात की गई, अब मूंगफली का तेल आयात किया जा रहा है। क्या भारत में तेल बनाने के कारखाने नहीं थे? गत वर्ष कपास को खरीदने वाला कोई नहीं था और कपास का निर्यात किया गया और अब कपड़ा मिलों के लिए कपास का आयात किया जा रहा है। क्या गए साल वह बफर स्टाक नहीं कर सकते थे? इसी तरह से मूल्य व मुनाफे की नीति बदलने की चेतावनी हमने कई दफा दी कि ये जो उद्योग-पति हैं उनको आप चेतावनी दीजिए। मूल्य और मुनाफे के बारे में चेतावनी दी गई लेकिन वे मानते नहीं और वर्तमान परिस्थिति को देखते हुए मूल्य और मुनाफे के संबंध में और उद्योग-पतियों की नीति बदलने के संबंध में सरकार स्वयं पुढाकार ले (पहल करे) और कच्चे माल का लाभकारी मूल्य और उपभोक्ताओं के मूल्य निश्चित करे।

अब मूल्य नीति को व्यवस्थित कैसे किया जाए इसके बारे में अपने संकल्प में उन्होंने कहा है कि आज की जो गवर्नमेन्ट की प्राइसिंग पालिसी है वह सिर्फ सपोर्ट प्राइस की है, समर्थन मूल्य की है, और वह भी हर चीज के लिए नहीं है; खाद्यान्नों की कुछ वस्तुओं के लिए, काटन और जूट के बारे में सपोर्ट प्राइस फिक्स करते हैं। उसमें सपोर्ट प्राइस का मतलब यह होना चाहिए—ठीक है, सपोर्ट प्राइस उचित है या नहीं है यह बात छोड़ देता हूं—लेकिन सपोर्ट प्राइस अगर देना है तो यह एश्योर होना चाहिए कि वह सपोर्ट प्राइस किसान को मिले। हर एक मामले में मण्डी में उसको खरीदने की व्यवस्था होनी चाहिए परन्तु वह व्यवस्था होती नहीं इसलिए सपोर्ट प्राइस उनको मिलता नहीं; नतीजा यह होता है कि यह जो सपोर्ट प्राइस गवर्नमेन्ट फिक्स करती है यह सपोर्ट फार्मर नहीं है, यह सपोर्ट ट्रेडर है। मेरा तो अनुभव यह है कि सपोर्ट प्राइस ट्रेडर को सपोर्ट करने के लिए फिक्स की जाती है क्योंकि फार्मर के वस्तुओं को खरीदने की सही मशीनरी उनके पास नहीं है। तो इसलिए दूसरा सुझाव जो उन्होंने दिया है वह बहुत महत्वपूर्ण है—खाद्यान्न के थोक व्यापार का प्रबन्ध ग्रहण करना और सभी वाणिज्यिक फसलों के राज्य व्यापार का विस्तार करना। तो वाणिज्यिक फसलों तथा प्रमुख वस्तुओं के उत्पादन के लिए लाभकारी मूल्य तय किए जाने चाहिएं। ऐसे लाभकारी मूल्य के आधार पर औद्यो-गिक कारखाने के लिए खरीदे माल के न्यूनतम तथा अधिकतम मूल्य तय किए

जाने चाहिएं। कारखाने के लिए जो कच्चा माल लगता है उसकी सप्लाई किए जाने के संबंध में अव्यवहार्य तथा गलत कार्य-प्रणाली को दूर करना चाहिए। मैंने अभी कहा है कि गलत प्रणाली कौन है और अव्यावहारिक प्रणाली कौन है। ये बिचौलिए ट्रेडर्स को हटा देना चाहिए। गवर्नमेन्ट को चाहिए कि डाइ-रेक्ट फार्मर्स से खरीद करे या अपने राज्य व्यापार निगम की मार्फत उनसे खरीद करे और इस अव्यावहारिक गलत प्रणाली को दूर करना चाहिए। बिचौलियों को हटा कर सरकारी तथा गैर सरकारी एजेंसियों के माध्यम से वसूलियों को बढ़ावा दिया जाना चाहिए। धागे के काउंट के आधार पर कपड़े का अधिकतम मूल्य निर्धारित करना चाहिए ... मैं अभी एक मिनट में खत्म कर रहा हूं।

उप सभाध्यक्ष (श्री लोक नाथ मिश्र): पाटिल साहब, आप एक भी मिनट लें लेकिन तकलीफ यह है कि और भी दो मेम्बरों के नाम हैं और आधा घंटा बाकी रह गया है। उसमें भी मिनिस्टर साहब को जवाब देना है। तो इसलिए सब को मौका दिया जाए तब भी पांच-पांच मिनट बोल सकेंगे, अगर मिनिस्टर साहब को वे सुनना चाहेंगे तो।

श्याम लाल जी, आप 5 मिनट ले सकते हैं।

श्री श्याम लाल यादव (उत्तर प्रदेश): माननीय उपसभाध्यक्ष जी, मैं आपका बहुत आभारी हूं कि आपने पांच मिनट का समय दिया। जो संकल्प प्रस्तुत किया गया है उसमें बहुत सी बातें कही गई हैं। बहुत सी बातें उनमें अच्छी भी हैं, प्रशंसनीय भी हैं। हमारे माननीय मंत्री जी जो कृषि विभाग से बहुत अरसे से सम्बन्धित हैं उसकी समस्याओं से पूर्ण-तया अवगत हैं। मैं समझता हूं इस सम्बन्ध में वे कार्यवाही करेंगे और सदन को अवगत कराएंगे।

दो-तीन बातों की तरफ मैं विशेष रूप से ध्यान आकर्षित करना चाहता हूं। एक तो यह बात मानी हुई है कि जब कृषि का उत्पादन बढ़ेगा तो उसका मूल्य अवश्य गिरेगा। औद्योगिक क्षेत्र में जो उत्पादन है, उद्योग-धन्धों का जो उत्पादन है उसका मूल्य अलग से निर्धा-रित होता है, लेकिन जब कृषि का उत्पादन अधिक हुआ तो उसका मूल्य गिरने लगा। किस तरह उसका मूल्य गिरने न दिया जाए और सपोर्ट प्राइस, समर्थन मूल्य किसानों को मिल सके, यह बहुत बड़ी समस्या है। इसको हल करने के लिए कई प्रदेशों ने बल्कि अधिकांश प्रदेशों ने मंडी समितियों का गठन किया है जिसमें किसानों के प्रति-निधि होते हैं जिससे मंडियों में जब किसान अनाज लेकर जाएं तो उनकी लूट न हो। यह जरूरी है कि मंडी समितियों को प्रभावकारी ढंग से कार्य-शील किया जाए, उनमें सही तरीके से किसानों के प्रतिनिधि लिए जाएं जिससे मंडियां समुचित रूप से अपने उत्तरदायित्व का निर्वाह कर सकें।

दूसरी बात जो इस सिलसिले में की जा सकती है वह यह है कि कृषि उत्पादन में किसानों को जिन चीजों की आवश्यकता पड़ती है उनको उचित दामों पर उपलब्ध कराया जाए। एक चीज मैं निवेदन करना चाहता हूं, जिसकी बड़ी चर्चा है और समाचारपत्रों में भी यह बात आई है कि योजना आयोग प्रदेश सरकारों पर इस बात का दबाव डाल रहा है कि सिंचाई की दरों में वृद्धि की जाए, बिजली की दरों में वृद्धि की जाए और भू-राजस्व में भी वृद्धि की जाए। मैं समझता हूं कि यह

वृद्धि अनुचित है, समयानुकूल नहीं है। हमारे उत्तर प्रदेश में भू-राजस्व में पिछले जमाने में अनेक प्रकार की वृद्धियां कर दी गईं। उनको वापस नहीं किया गया, समाप्त नहीं किया गया। वे वृद्धियां उसी प्रकार से कायम हैं। कभी विकास शुल्क लगता है तो कभी कोई और अतिरिक्त कर। ये सारे के सारे भू-राजस्व माने जाएं। इसमें कोई दो राय नहीं होनी चाहिएं। सिंचाई की दरों में वृद्धि की कोई आवश्यकता नहीं है। हमारे उत्तर प्रदेश में सिंचाई का जो मैनुअल बना है वह पता नहीं कब का बना है। एक फसल गन्ने की होती है। गन्ने के उत्पादन में खेत साल भर फंसा रहता है। इस साल हमारे जिले में सिंचाई विभाग ने कह दिया कि हम पानी नहीं देंगे और रेट का कागज तैयार होने लगा। मैनुअल में यह है कि एक भी पानी सिंचाई विभाग दे देगा तो पूरी सिंचाई दर, रेट वसूल कर लेगा जिससे किसान परेशान हो जाता है। कहीं बरसात होने के बाद नालियों से बहता हुआ पानी चला गया तो किसानों पर रेट लग जाता है। मैं माननीय मंत्री जी से अनुरोध करूंगा कि इस मैनुअल को देखें। अगर गन्ने में पानी देना सिंचाई विभाग मना कर दे और बरसात में केवल एक पानी चला जाए तो उनसे रेट वसूल नहीं होना चाहिए।

बिजली की दरें भी नहीं बढ़नी चाहिएं उसमें किसी प्रकार की वृद्धि करने से जो पम्पिंग सेट किसान चलाता है उससे कोई लाभ नहीं होगा। आज भी उस पर मिनिमम चार्ज लगा हुआ है जो देना पड़ता है, बिजली बन्द रहे तब भी देना पड़ता है।

उर्वरकों का दाम बढ़ा हुआ है। मंत्री जी ने कृपा करके कुछ कमी की। लेकिन अब जब हमारे देश में क्रूड आयल का उत्पादन हो रहा है, कोयले से उर्वरक बनाया जा रहा है, उर्वरकों के दाम में और कमी की जाए। हमने एक समाचार पढ़ा तीन-चार रोज पहले कि उर्वरकों के मूल्य में कोई कमी नहीं की जाएगी। मैं समझता हूं कि यह समाचार किसानों के हितों के विरुद्ध था और सरकार को इस पर पुनर्विचार करना चाहिए और उर्वरकों का दाम घटाना चाहिए।

मान्यवर, एक बात और। गन्ने के मूल्य और चीनी के मूल्य में समानता होनी चाहिए। इस पर विचार करना चाहिए कि चीनी के मूल्य आज आसमान को छूते जा रहे हैं। आज चीनी का मूल्य उच्चतम स्तर पर पहुंच गया है। चीनी सरकार द्वारा रिलीज भी हो रही है ज्यादा से ज्यादा सरकार रिलीज कर रही है, और देश में चीनी है भी ज्यादा, लेकिन उस के बाद भी उस के दाम बढ़ते जा रहे हैं। इस संबंध में मंत्री जी क्या कदम उठा रहे हैं यह अभी तक स्पष्ट नहीं हो पाया है। बराबर समाचार पत्रों में न्यूज आ रही है। मुजफ्फरनगर और दूसरी जगहों में चीनी के दाम बढ़ रहे हैं। इन को कम करना चाहिए।

इसके बाद जो पांचवें नम्बर पर हमारे भाई इन्द्रदीप सिंह जी का सुझाव है कि खाद्यान्न के थोक व्यापार का प्रबंध ग्रहण करना और सभी प्रमुख वाणिज्यिक फसलों में राज्य व्यापार का विस्तार करना, मैं समझता हूं कि इस कार्य को पिछले दिनों कुछ थोड़े समय के लिए चलाने का प्रयास किया गया था, लेकिन वह सफल नहीं हुआ और उस के बाद सरकार को फिर प्रोक्योरमेंट

पालिसी को ही चलाना पड़ा। मैं समझता हूं कि अनुभव के आधार पर भी और व्यवहार के आधार पर भी यह बात स्पष्ट हो चुकी है कि राज्य सरकार थोक व्यापार को, अनाज के थोक व्यापार को नहीं चला सकती। उसमें उस को बहुत-बहुत मुश्किलों का सामना करना पड़ा है और बहुत सी बर्बादी भी हुई है और किसानों को उससे लाभ नहीं हुआ और बिचौलियों को उससे ज्यादा नफा हुआ और सरकार को घाटा हुआ। तो मैं समझता हूं कि सरकार को थोक व्यापार अपने हाथ में लेने की आवश्यकता नहीं है। उस की प्रोक्योरमेंट पालिसी काफी सफल रही है। उस से इस बार जितना अनाज मिला है उतना पहले कभी नहीं मिला था। लेकिन इस में इस बात की अवश्य व्यवस्था की जाए कि जो बीच के लोग हैं वह उसका फायदा न उठा सकें और गेहूं की जो किस्म निर्धारित की जाती है उस का पुनरीक्षण होना चाहिए कि किस आधार पर किसानों का अनाज रिजेक्ट होगा। वह अनाज ही व्यापारी लोग खरीद लेते हैं और बाद में वही अनाज सरकार को सप्लाई कर दिया जाता है।

● एक बात मैं और निवेदन करना चाहता हूं। दूध का उत्पादन बढ़ाने के लिए भी कुछ प्रयास होना चाहिए। यह भी कृषि से ही संबंधित है। एक प्रकार से उसी का उत्पादन है। पशुओं की नस्ल के सुधार का काम भी बढ़ रहा है और फ्लड आपरेशन स्कीम भी हमारे प्रदेश में चल रही है। लेकिन दूध का व्यापार इतना कच्चा सौदा है कि उस में उस के रख-रखाव की कोई व्यापक व्यवस्था नहीं हो पाती और उससे किसानों का अहित हो जाता है। दूध पर किसी समय राज्य सरकार या जिले का प्रशासन अगर प्रतिबंध लगा देता है तो वह बाहर नहीं जा पाता और जो दूध वहां पैदा होता है उस की खपत नहीं हो पाती। उस का वहां मार्केट नहीं है। हमारे प्रदेश से बहुत दूध दिल्ली में आता है। बहुत सा हिस्सा कानपुर को चला जाता है, लखनऊ को जाता है और वाराणसी से बहुत सा दूध का सामान खोया आदि कलकत्ता और वैद्यनाथ धाम चला जाता है। अगर वह वहां न जाए तो वहां के मार्केट में हाहाकार मच जाता है तो इस पर सम्यक दृष्टि से विचार होना चाहिए। आए दिन इस प्रकार के प्रतिबन्ध लग जाते हैं कि दूध बाहर नहीं जा सकता और दूध से बनी हुई चीजें बाहर नहीं जा सकतीं। इससे किसानों का नुकसान होता है। उसके लिए लोकल मार्केट वहां होती नहीं कि जहां उस की खपत हो सके और उस को रखने की व्यवस्था नहीं हो पायी है। इसलिए इस बात पर विचार होना चाहिए और जो पशुओं का चारा है उस संबंध में निवेदन है कि अब धीरे-धीरे पशुओं के चारागाह समाप्त होते जा रहे हैं। भूमि की सीमाबंदी हो गई है। जो फालतू जमीन गांव सभा की थी वह वितरित की जा रही है लोगों को बसने के लिए और खेती के लिए। तो इस प्रकार चारागाह समाप्त होते जा रहे हैं। इसलिए अब पशुओं का चारा जो फैक्टरियों में बनाया जाता है वह और अधिक उपज वाली घास या दूसरा चारा जो पैदा किया जा सकता है उसके उत्पादन पर अधिक जोर दिया जाना चाहिए जिससे कि पशुओं पर जो लागत आती है उसमें कमी हो और दूध के उत्पादन की लागत कम हो सके।

इन शब्दों के साथ मैं समझता हूं कि जो प्रस्ताव इन्द्रदीप सिंह जी ने पेश

किया है वह आवश्यक है और ऐसा कर के उन्होंने किसानों की बहुत सी समस्याओं के बारे में सरकार का ध्यान आकर्षित किया है। उन पर आशा है माननीय मंत्री जी गौर करेंगे और कुछ ठोस कदम उठाएंगे जिससे किसानों को राहत मिल सके और उनका उत्साहवर्धन हो सके और ऐसा कर के अगर देश के किसानों को आप संतुष्ट रखते हैं और कृषि का उत्पादन बढ़ता है तो ऐसा होने पर ही देश का आर्थिक विकास होगा। कोई दूसरा विकल्प नहीं है कि कृषि उत्पादन न बढ़े और देश में विकास हो सके। बिना कृषि की उन्नति के देश के उद्योग धंधे नहीं चल सकते और यहां कोई इंडस्ट्री नहीं चल सकती, कोई व्यवस्था नहीं चल सकती अगर कृषि का उत्पादन नहीं बढ़ता। यह हमारी आर्थिक प्रगति की बुनियाद है और मुझे प्रसन्नता है कि बीस सूत्री कार्यक्रम में इस बात पर सर्वाधिक ध्यान दिया गया और सिंचाई के साधनों को बढ़ाने के लिए विशेष जोर दिया गया।

मान्यवर, अंतिम बात...

उपसभाध्यक्ष (श्री लोकनाथ मिश्र) : यादव साहब, मिनिस्टर साहब को अगर आप सुनना चाहते हैं तो अब समाप्त कीजिए।

श्री श्याम लाल यादव : श्रीमन्, सिंचाई बढ़ाने के लिए हमारे उत्तर प्रदेश की सरकार ने बहुत से सुझाव भेजे हैं। मैं माननीय मंत्री जी से निवेदन करूंगा कि वह सबको स्वीकार करें ताकि सिंचाई का जो लक्ष्य हमारे प्रदेश ने निर्धारित किया है, वह इस वर्ष पूरा हो सके। धन्यवाद।

THE VICE-CHAIRMAN (SHRI LOKANATH MISRA) : Mr. Khurshed Alain Khan, would you insist on speaking at this stage or . . ?

श्री खुरशीद आलम खान (दिल्ली) : उप सभाध्यक्ष महोदय, मैं तकरीर नहीं करूंगा। मंत्री महोदय ने यह कहा था कि कोई स्पेसिफिक कंप्लेंट हो तो बताएं। मैं यह कहना चाहूंगा कि फरुखाबाद में आलू की पैदावार के सिलसिले में हमने बहुत कुछ इन से कहा है। लेकिन आज तक उस पर कुछ नहीं हुआ और यह भी इन्होंने वायदा किया था कि वहां एक पोटैटो स्टार्च फैक्ट्री लगाने के लिए हम कुछ काम करेंगे। उसका भी कुछ नहीं हुआ। तो यह एक स्पैसिफिक चीज है इस पर मंत्री जी रोशनी जरूर डालें। धन्यवाद।

SHRI ANNASAH1B P. SHINDE: Mr. Vice-Chairman, Sir, I have been listening to a very interesting debate, and not only interesting but important from the point of view of the country's economy. I think all of us are thankful to Shri Indradeep Sinha, one of our colleagues in this House, who has brought forward this Resolution for discussion. And we could see how wide has been the interest of the hon. Members in this subject. At the outset, 1 must say and I must admit, Sir, that the subjects covered by the Resolution are so wide-ranging—they concern the Commerce Ministry, they concern the Finance Ministry, and they concern the Planning Commission—that it is a very difficult job to cover all of them. All the same ...

SHRI SHYAM LAL YADAV : Basically they concern us.

SHRI ANNASAHIB P. SHINDE : All the same, I would try to be brief and at the same time cover as many points as possible. Sir, the very fact that such a large number of Members from all sides of the House very vehemently pleased the cause of the farmers is a very good sign for the country. And I don't think the farmer's cause will suffer because of lack of support on the floor of the House. That is what I could understand from the trend of the debate. But, Sir, I would like to dispel one impression at the outset. I fhink the hon. Members will agree with me and I am not suggesting that there is no scope for improvement in the Government's policies. In fact, it should be a continuous exercise, it should be a constant effort on the part of the Government of India to make an assessment to find out what has gone wrong, and give the necessary directions which need to be considered and all that. I would like to submit for

the consideration of the House and the hon. Members that to my mind, basically, the direction which is given by the Government of India and my Ministry to the agricultural policy is in the right direction. And I say that there are two yardsticks for it. First of all, the agricultural production is continuously going up. Had the Government's policy been basically wrong, this would not have happened ...

SHRI KALP NATH RAI : Rains also helped.

SHRI ANNASAHIB P. SHINDE : Sir. .he should not interrupt me. I have so many arguments. In 1964-65, there were good rains. In 1971-72, there were good rains. But the position was not easy. So, I don't think he should interrupt me. Just as I listened to him attentively, he should be generous to listen to me. Sir, the point I was making is about the Government's policy. I have considered this position, as I have said. In the Government's policy, an improvement can be made and necessary correctives can be provided from time to time. I have considered that position. But after making that submission, I am raising this point that basically the direction of the Government's policy is right, and the thrust of the policy is right, and that is why the agriculture production is coming up. It is a very difficult and complex subject. And the fact that agriculture production is coming up shows that the Government's policy formulation and support to agriculture production programmes is basically sound.

Sir, the other important aspect is that whatever other steps that have been taken during the last few months go to show that we can succeed even under the present broad framework of the policies to have stability in prices. This again is a great achievement. And if the Government policies had not been in the right direction there would have been neither the continuous growth of agricultural production over a long period nor stability in prices. These two are basically very important from the point of view of the country's economy. We could never have achieved all that had the Government's policy been basically wrong. Now, Sir, I would like to add one more point before I go into some other details. The Government's policy in one direction is very clear. For instance, during the last five, seven, eight or ten years Government has been putting up or establishing a number of public sector organisations. First of all, a decade earlier the Food Corporation was set up and the intention was that in foodgrain trade the public sector organisation like the Food Corporation should have a commanding voice or a commanding role to play and gradually over a period we are now in a position to say that the Food Corporation today is in a position to play a very important role. Now, Sir, I would just appeal to the good sense of the hon. Members and ask, in spite of all the criticism, suppose the Food Corporation would not have been in the market this year or the State Government agencies would not have been in the market, what would have happened to wheat prices ? The prices would have perhaps slumped to Rs. 80 or Rs. 85 per quintal. Even today in spite of large-scale operations, support prices and procurement prices the prices went down in certain parts. Had these public sector organisations not been there what would have happened ? Literally thousands of crores of rupees have been pumped in in the largest ever operation carried on in the history of this country. If this were not done, I think the farmers' cause would have suffered an incalculable harm. Therefore, the importance of the activities of the public sector organisations has to be appreciated.

Then, Sir, I can understand that the Jute Corporation or the Cotton Corporation have not succeeded to that extent as the Food Corporation in expanding their activities but the organisations have been created. Now, it is for us to see how these organisations can be purposefully used to support the cause of the fanners, at the same time, encouraging production and providing necessary raw materials to our jute and textile industries. Therefore, the point I was making is that basically, be it the National Seeds Corporation or other State agencies or even the co-operative MARKFED, they are playing a very important role and the Government's endeavour in times to come would be to strengthen these organisations and remove drawbacks and weaknesses in these organisations and see that these organisations are in a position to play a very important role in the field of trade of agricultural commodities.

Sir, after making these observations, I would like to come to certain specific issues raised by the hon. Members. Now the hon. Member, Shri Indradeep Sinha, has raised the specific issue of reduction in the margin between purchase and sale price of agricultural commodities to 15 per cent. If this is feasible or possible, I have no objection in principle. But the question is, is it possible ? Now I would like to cite an instance. These facts have been mentioned in the House a number of times and I have requested hon. Members to make suggestions wherever there is scope for reducing the cost of incidentals for procurement or distribution. Now, take the case of wheat because there is no time for me to go into the details of all the commodities. I will only specifically deal with the case of wheat. I can tell hon. Members that as far as the over-head expenditure of the Food Corporation is concerned, it is less than Rs. 2 or Rs. 2i. It is not more than that. But eveh then the total margin within which the Food Corporation has to operate is much

highei. The difference between (he purchase price and the procurement price including incidentals comes to Rs. 17.57. J can go into the details but 1 do not think there is any need for it. Most of these constitute the *mundi* charges, labour charges, purchase tax that the State Government charges, temporary storage charges, forward internal bank commission, entry charges, octroi, depreciation, etc. Then, Sir, distribution incidentals of wheat are freight, interest, transit and storage loss, storage charges, handling charges and administrative overheads, which come to Rs. 14. So, if we lake into consideration these two factors alone, the per quintal expenditure comes to R&. 31 by the time wheat is brought to the consuming centre. But we are not bringing wheat to Delhi alone. We are taking it to Mizoram, Lahaul and Spiti, Jammu and Kashmir, Kerala and other places. We distribute wheat at the same prices to all the State Government and we purchase it at the rate of Rs. 105 per quintal and issue it to the State Governments at Rs. 125 per quintal. Actually the cost is much higher than that. Actually the Government of India incurs a loss on that account in the interests of consumers. I would appeal to the good sense of hon. Members—whoever is interested in having these figures, I am prepared to furnish this information—and request them to make their suggestions to me in this regard. And if there is any scope, the Government of India, I can assure the hon. Members, will, in right earnest, go into these matters and try to see that if there are reasonable suggestions, they are implemented. We shall seriously try to implement them. So far the exercise of the State Governments has been that the State Governments also feel that these are reasonable margins because in many cases the State Government agencies also operate instead of the Food Corporation. Take the case of Haryana. In Haryana Food Corporation does not operate. Even if there is a State Government agency operating, it also ihcurs the same expenditure. Therefore, whether it is the Food Corporation or whether it is any other agency, there is no difference. If the Food Corporation had been really incurring more expenditure than the State agency, then one could have understood it. All that I am putting before the House, Sir, is the general assumption that we agree with the principle that between the purchase and procurement price and the issue price to the consumer, the difference should be as reasonable as possible. In fact, today, the Government of India is spending more than 200 crores of rupees by way of subsidy in order to protect the interests of the consumers and to see that the foodgrains are issued at a reasonable level of price to the consumer. Therefore, the consumers' interest is nearest to our heart. As far as the intentions are concerned, neither Shri Indradeep Sinha nor anybody on this side of the House or myself would have any difference of opinion.

Then, I would take you to the extreme case of potatoes. In the case of potatoes, recently, NAFED, one of our national organisations, has been purchasing potatoes. They purchase it and also export and sell it in the internal market also. We know that per quintal expenditure almost comes to Rs. 40. That means even where the potato is purchased at Rs. 45 a quintal or Rs. 50 a quintal or Rs. 60 a quintal, the expenditure comes to Rs. 40 a quintal. Then this does not include shortages and spoilage because shortage occurs when moisture percentage comes down after the potatoes are purchased because they are purchased immediately in the post-harvest period and if they are carried and put in the cold storage and then they are brought to the markets, there is some shortage and spoilage because of loss of moisture content etc. Even excluding this, still there is some loss. Therefore, to think of having a difference of 15 per cent only in the purchase price and the selling price, 1 do not think, will be quite realistic. What I would have to do is to see that the difference is as minimum as possible. If at any level, inefficiency is involved, then our effort should be to see that inefficiency is not allowed to increase the expenditure on overheads. But, broadly, I can say that in the case of agricultural commodities, as far as the foodgrains are concerned, the Government of India is also interested in protecting the consumers' interests and we shall see that the difference is kept at the minimum. As far as perishable commodities are concerned, the same yardstick cannot be applied. In case of perishable commodities, perhaps, the margin is likely to be much higher.

Then, Sir, I would like to touch upon the other point raised by Shri Indradeep Sinha and others, about the levy, like rates of land revenue, water rates, electricity charges) etc. from the small and marginal farmers on the commercial crops. Many thinkers in this country—the Planning Commission, thinkers and economists— have been of the view that agriculture is not taxed. There is no income-tax on agriculture. That is number one. Secondly, in many of our projects, take the case of irrigation systems, in this country, the hon. Members will be shocked to hear that we have invested thousands of crores of rupees in the irrigation systems, for building up irrigation because if the country is to ensure against shortages, I think we will have to do it; in fact, it is even included in the 20-point programme. Now we find, i'n Maharashtra, the return on this invest, ment is 3 per cent, which is the highest ir the country. In Gujarat, it is 2 per cent o slightly less. In U.P., after the increase o rates, it is nearly 2 per cent and in th< rest of the States, Sir, by and large, ever

IShri Annasahib P. Shindel the maintenance and the operational expenditure is not recovered. 1 am talking of return on direct investment. Suppose, in an industry, we make an investment; we make investment in a productive project. Now there are certain norms of calculating the return. Even the norms which have been prescribed by the Irrigation Department and the Planning Commission are very modest. The Irrigation Department and the Planning Commission expect a return of 5i per cent only on the irrigation investments. Now, the rate of interest is very much higher. The return expected is only 5i per cent. Well, we are not in a position to get even two or three per cent return on the investments made in irrigation. What is its impact ? Its impact is that those who get the irrigation water are benefited. But in this country, only 22 or 24 per cent of the area is irrigated and the rest of the area is not irrigated. Perhaps, if all our water resources are harnessed during the next two decades, 50 or 60 per cent of the area would be irrigated. But if resources are generated, the people who are having dry lands are benefited more. But because the resources are not being generated and the resources are not adequate to establish additional projects, less return from the existing projects means that the people who have irrigation facilities become a privileged class. Those who are supposed to get the benefits by the establishment of the additional projects, are not able to get the benefits. The benefits are delayed. This is because we are not in a position to get an adequate return. This point has been repeatedly discussed in the national forums. A number of times, Government of India have made public declarations on this and 1 think the hon. Members should be in a position to understand this.

Then, I would touch upon only one more point. This is in regard to land revenue. What is the position in regard to land revenue in this country ? The land revenue rates were fixed half a century earlier. Of course, in some cases, some improvement has been made. But what is the land revenue rate today ? It is Rs. 4 or Rs. 5 per acre. I think even in regard to irrigated lands, there are differences. There is a need to bring it up. I agree that the interests of the small and the marginal farmers should be protected. But generally, when we go into these matters, we find that there is really a considerable scope for raising resources in the inte est of the development of the country and in the interest of the development of agriculture and other sectors of the economy. Therefore, when we make general propositions for lowering these rates etc., we should take this into account. I do not think Shri Indradeep Sinha is on a very sound footing so far as these matters are concerned. Then, Sir, there is another point on which there cannot be any dispute. This is in regard to giving some priority to the small and the marginal farmers as far as marketing operations are concerned. We have to see whether this could be done in some way. By and large, we are interested in mopping up all the surplus. If there is a producer, a relatively big farmer, and if we do not purchase the surplus food-grains from him, he will have a tendency to indulge in profiteering. He will take advantage of the situation and indulge in blackmarketing and so on. Therefore, it will not be in the interest of the country if we do not mop up the surplus food-grains with such farmers. As far as marketing operations are concerned, we have an open mind. We welcome suggestions from the hon. Members on how the small and the marginal farmers could be helped in regard to marketing. We have an open mind on this. We are prepared to accept any suggestions from the hon. Members. We are prepared to accept any precise suggestions which the hon. Members would like to make in regard to improving the marketing structure.

SHRI DEORAO PATIL : What about cotton and jute ?

SHRI ANNASAHIB P. SHINDE : In regard to cotton and jute, my difficulty is that they are dealt with by the Commerce Ministry. The prices are also fixed by them. But Sir, as a Ministry dealing with the production aspect, I can only tell the hon. Members that if marketing operations are affected, production is also affected. Therefore, our interest is to see that necessary marketing support is extended to agricultural operations. We also take up the cause of the farmers with the other Ministries *to* see that they are properly paid for their produce.

Take, for example, the question of tractor prices. Some of the hon. Members have raised the question of tractor prices. On this, we have been having some correspondence with the Finance Ministry. Naturally, the decision rests with them. My senior colleague, Shri Jagjivan Ram, and even myself, have been discussing this question with the Finance Ministry for the past 12 months. We have not succeeded so far in convincing the Finance Ministry. But I would inform the hon. Members that we will again take it up with the Finance Ministry and with their support, perhaps, we may succeed in arriving at some decision.

5 P.M. SHRI KALP NATH RAI : Fertilisers ?

SHRI ANNASAHIB P. SHINDE : I think we have done quite a lot for fertilisers.

THE VICE-CHAIRMAN (SHRI LOKANATH MISRA) : Mr. Shinde, how much time would you like *to* take ?

SHRI ANNASAH1B P. SHINDE : Better il vim allow me to sit down. It is a very wide subject and perhaps 1 cannot do justice to the subject. Iseder if I finish it now because othc:wise it will talc :. Only one or two minutes more 1 will take. 1 wouU iikc to make only two observations. Take-over of wholesale trade or national,- i of jute, textiles and sugar are very v.'.iv subjects and with ..il the hurni- niy command 1 woulei submit I'oi consideration of lion. Members that try is ualiscd would not be collect. 1 do not thnk it i> Mich a simple solution.

SHRI KALP NATH RAI : Wha1 id. u sugar industry '.'

SHRI ANNASAH1B *DH* : Even sugar industry, there are many ad- tninistrative, Una >nal an I other problems.

SHRI KALP NATH, RAI. Promises?

SHRI ANNASAHIB P. SHINDE: Gov eraan a responsibility to see that promises il do . no) i any harm to the economy as a whole. So we have to consider these prob a carefully and alter considering, alter weigh ing all the pros and cons Government Eai to come tp a conclusion. I think thi' point has l»eeii replied on a number o occasions by Mr. Shah Nawaz Khan others. Therefore, I would like to make a broad submission that as far as my Ministry is concerned, 1 appreciate the sympathy and support of the hon. Members, lion. Members should be happy that with the co-operation of the Indian farm ers who are a very hard-working comtnu nity—who labour da.) in ami day out—the tits that we are getting are very encouraging. With the co-operation and in I lion. Members we shall continue to make progress and further advan ulture so that this conn try becomes a first-rate power in times t< tome.

[HE VICE-CHAIRMAN (SHRI LOKA-NATH MISRA): Now that it is one roinute past live, we can go over to the next item. Mr. Bhupesh Gupta.

[The Vice-Chairman (Shri V. B. Raju) in the Chair.]

HALF AN HOUR DISCUSSION ON POINTS ARISING OUT OF ANSWER TO STARRED QUESTION NO. 35 GIVEN ON HTH AUGUST. 1976 RE-GARDING REDEVELOPMENT OF CHAWRI BAZAR AREA IN DELHI

SHRI BHUPESH GUPTA (West Bengal) : Sir. I rise to raise a discussion 6-670 RSS/76 on the resettlement and redevelopment of the Chawri Bazar area not exactly with die same feci ing with which 1 visited that area immediately after the so called scheme d by the Delhi Municipal Corporation on May 27th this year because, Since then—between that time and now— things have somewhat seemed io have improved in the thinking of the authorities concerned. Nevertheles, the issue is one ..inch calls for consideration by Parliament.

Sir, we are discussing the redevelopment not of any area but of Shahjahanabad, the in this Oicat city of our past heritage—our heritage, our way of life and the traditions of our freedom struggle. I think I would b- well-advised to begin the ion by referring to the House what Prime Minister Indira Gandhi said in her message to the UN Conference on Human Settlement held in Vancouver, Canada :

> "Cities are losing their personalities A closed-in atmosphere of high-rise buildings causes complex social and psy-chological problems. We must preserve what we inherit from the past and prolong the life of what we build..."

Coming to Shahjahanabad City, Prime Minister Indira Gandhi sent a message once on die redevelopment of the halijahanabad area last year. In that message she said :—

> "Shahjahanabad is a unique mixture ol beauty and squaloi . . . Yet the Walled City remains the repository of much thai is line in the artistic and social life ol our people."

"the ;lien adopted a lecommen la!ion in 'inch it was said : "The problem' of redevelopment of Shahjahanabad shoult n from human and sociological pers pective... and ... that in the overal b to redevelopment of the City putting it down would be wrong." Now, Sir I also speak in the same spirit. The Prime Llent words in this matte • us Ihe guidelines for our approacl men! of the historic city o Shahjahanabad and Chawri Bazar in parti cular. Sir, I am for retaining the culture herita] i the same time, adding t the majesty that has been bequeathed to u from the bygone days. What is importan for us is t" find ways and means of blend ight perspective of future wit cellence of our great culture of th past,

Now about the area. This is an are (rich recalls to mind the historic contribu tion. This is an area where Hindus ani Muslims have lived in refeshingly fir Hindu-Muslim brotherhood in the days i